ॐ
भा
र्द्ध-शताब्दी
वरण

Audit Note on the Accounts of the Golden Jubilee of the Arya Pratinidhi Sabha, Lahore held from 15-9-37 to 28-9-37.

The Golden Jubilee of the Arya Pratinidhi Sabha, Punjab was celebrated at Lahore in April 1936. To commemorate this important event, preparations were made from the beginning of 1935.

2. At the outset it was decided that a sum of Rs. 2,50,000/- should be collected in aid of the following institutions :—

(1)	Ved Prachar	Rs.	1,00,000/-
(2)	Research Department Veda Bhashya	Rs.	50,000/-
(3)	Village Prachar (Medical Mission etc.)	Rs.	1,00,000/-
		Total Rs.	2,50,000/-

3. To achieve this object, the Sabha thought it advisable to issue printed "Notes" so that money may be recovered easily. Altogether "Notes" and "Receipt Books" valuing Rs. 6,12,300/- were printed as under :—

100 Rupee "Notes"	999 Copies	99,900/-
50 Rupee "Notes"	5,000 Copies	2,50,000/-
25 Rupee "Notes"	5,000 Copies	1,25,000/-
10 Rupee "Notes"	5,000 Copies	50,000/-
5 Rupee "Notes"	10,000 Copies	50,000/-
1 Rupee "Notes"	24,900 Copies	24,900/-
		5,99,800/-
Add 4 Anna Receipt Books		12,500/-
	Total Rupees	6,12,300/-

(*Continued on Title Page 3*)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

अर्द्ध-शताब्दी विवरण
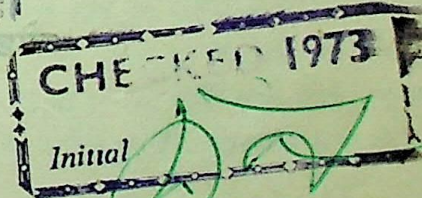
*सभा का संक्षिप्त

परिचय

अक्तूबर, १८८५ में आर्यसमाज अमृतसर का वार्षिकोत्सव हुआ। इस अवसर पर पञ्जाब की समाजों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में २० समाजों के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। इस सम्मेलन में पञ्जाब की आर्यसमाजों को एक केन्द्र में संगठित करने के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की स्थापना का निश्चय किया गया। इस सभा के उद्देश्य निम्न प्रकार निश्चित हुए—

१. वेदों तथा प्राचीन आर्ष ग्रन्थों की पढ़ाई के लिए तथा आर्योपदेशकों की तैयारी के लिए एक विद्यालय स्थापित करना।
२. सर्वसाधारण के लाभार्थ धार्मिक तथा विज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकों का एक पुस्तकालय स्थापित करना।
३. वैदिक शिक्षा के पुनरुज्जीवन के लिए लेख तथा पुस्तकें प्रकाशित करना।
४. पञ्जाब तथा अन्य प्रान्तों में वैदिक धर्म के प्रचार का प्रबन्ध करना।
५. वैदिक धर्म के प्रचार के लिए साधन निरूपण करना तथा ढूँढना।

सभा का मुख्य स्थान लाहौर नियत हुआ। सभा का कार्यालय आर्यसमाज वच्छोवाली में स्थापित हुआ।

प्रारम्भिकावस्था में सभा के दो प्रमुख कार्य थे। एक वेद-प्रचार तथा दूसरा शिक्षा-प्रचार। उस समय सभा के वैतनिक प्रचारक तो एक-मात्र पं० मणिराम थे जो पश्चात् महामहोपाध्याय पं० आर्यमुनि के नाम से विख्यात हुए। हाँ, स्वतन्त्र प्रचारकों की संख्या पर्याप्त थी। संन्यासियों की संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ रही थी। पढ़े-लिखे सभी आर्य, प्रचारक बन जाते थे। इस प्रचार के बाल्य-काल में विशेष पाण्डित्य की आवश्यकता न थी। पहले

* सभा के गत पचास वर्षों के आन्दोलनों का विस्तृत इतिहास सभा की ओर से पृथक् प्रकाशित किया गया है। प्रत्येक आर्य तथा आर्यसमाज को इसका अनुशीलन करना चाहिये। इसमें पञ्जाब में हुए आर्यसमाज सम्बन्धी आन्दोलनों और बलिदानों का रोमांचकारी वर्णन किया गया है। आर्य वीरों के चित्र भी दिये गए हैं। यह सभा-कार्यालय गुरुदत्त भवन से २॥) में मिलता है।

दिनों में स्वा० आत्मानन्द, स्वा० ईश्वरानन्द, ब्र० रामानन्द तथा स्वा० आलाराम आदि महानुभावों ने प्रचार का काम आरम्भ किया। चौ० नवलसिंह रोहतक के सर्व-प्रिय कवि थे। वे अपनी लावनियों द्वारा अन्य आर्य सिद्धान्तों के प्रचार के साथ-साथ गो-रक्षिणी सभाओं की स्थापना कर रहे थे। चौधरी जी की लावनी की एक पंक्ति पाठकों के मनोरञ्जनार्थ उद्धृत की जाती है—

इधर धर्म का झंडा गाड़ें, उधर अधर्मी रहे उखाड़।

साधु रमताराम स्थान-स्थान पर धर्म-घट रखवा कर उनमें प्रति-दिन आटे की एक-एक मुट्ठी इकट्ठी करवा रहे थे। स्वा० कृष्णानन्द, स्वा० भास्करानन्द, स्वा० मौजानन्द, स्वा० गोकुलानन्द, स्वा० सहजानन्द, स्वा० सदानन्द, स्वा० गिरानन्द, स्वा० अक्षयानन्द, स्वा० प्रकाशानन्द, स्वा० अमेरानन्द, स्वा० स्वात्मानन्द, ब्र० नित्यानन्द, स्वा० अच्युतानन्द आदि साधुओं के नाम उन दिनों के प्रचारकों में मिलते हैं। १८८७ में पं० लेखराम 'आर्य गज़ट' फ़ीरोज़पुर के सम्पादक के रूप में आर्यसमाज का प्रचार कर रहे थे। ला० मुंशीराम और ला० देवराज जालन्धर में आर्यसमाज का प्रचार कर रहे थे। इन दोनों महानुभावों के सम्पादकत्व में १८८९ में 'सद्धर्म प्रचारक' जारी हुआ। पं० गुरुदत्त एम० ए० के वैज्ञानिक तथा धार्मिक व्याख्यान बड़े मनो-मोहक हुआ करते थे। महता अमींचन्द के भजन आर्य-जगत् में बड़े विख्यात हो रहे थे। हिसार-समाज से ला० लाजपतराय समाज के कार्य-क्षेत्र में प्रवेश कर रहे थे। यह है पञ्जाब में आर्यसमाज के प्रारम्भिक दिनों के प्रचार की अवस्था।

इस युग के पश्चात् प्रचारकों की वह श्रेणी आती है जिसमें स्वा० दर्शनानन्द, स्वा० विश्वेश्वरानन्द, स्वा० नित्यानन्द, पं० गणपति शर्मा, पं० पूर्णानन्द, म० चिरञ्जीलाल आदि हैं। इसी युग में स्वा० सत्यानन्द और स्वा० सर्वदानन्द प्रचार-क्षेत्र में आए। पं० रामरत्न मधुर उपदेश में, पं० शिवशंकर काव्यतीर्थ विद्वत्ता में, पं० हरनामसिंह ओजस्वी भाषण में और स्वा० योगेन्द्रपाल शास्त्रार्थों में प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे थे। पं० तुलसीराम ने शहीद होकर अपने दृढ़ धार्मिक विश्वास का परिचय दिया। हरियाना-निवासिनी माई भगवती भी उस समय की एक प्रसिद्ध प्रचारिका हो गई हैं। पञ्जाब के आर्य सज्जन प्रान्त के अतिरिक्त विदेश में भी प्रचार करते रहे हैं। डा० चिरञ्जीव १९१२ में मारीशस गए और वहाँ डाक्टर का कार्य करते हुए वैदिक धर्म का प्रचार भी करते रहे। १९१६ में स्वा० स्वतन्त्रानन्द मारीशस पहुँचे। १९१४ में डा० केशवदेव शास्त्री के प्रयत्न से अमेरिका में दो आर्यसमाज स्थापित हो गए।

इस के पश्चात् वर्त्तमान युग का प्रारम्भ होता है। शुद्धि तथा दलितोद्धार यद्यपि प्रचार का ही अंग है तथापि दो शब्द इनके सम्बन्ध में भी उल्लेखनीय हैं। पं० गंगाराम ने १८८८ में ओडों की शुद्धि करके इस आन्दोलन का बीजारोपण किया। १९०० में रहतियों की शुद्धि का कार्य लाहौर, जालन्धर, लायलपुर, रोपड़ आदि नगरों में प्रारम्भ हो गया। इन्हीं दिनों डा० चिरञ्जीव

भारद्वाज ने बड़ोदा राज्य में ढेढों को शुद्ध किया। १९११ में खैरपुर नाथनशाह (सिन्ध) में वसिष्ठों की शुद्धि हुई। मीरपुर के इलाके में ४६ ग्रामों की शुद्धि की गई। मेघों की शुद्धि का कार्य इतना बढ़ गया कि १९१२ में आर्य मेघोद्धार सभा सियालकोट की स्थापना हुई और १९२३ में सभा ने पञ्जाब दयानन्द दलितोद्धार सभा की स्थापना की। पं० लेखराम ने १८९७ में बलिदान होकर आत्म-समर्पण का आने वाले आर्य वीरों को पाठ तो पढ़ा ही दिया था। इसी पाठ का अनुसरण करते हुए दलितोद्धार आन्दोलन में म० रामचन्द्र जम्मू में १९२३ में और श्री स्वामी श्रद्धानन्द शुद्धि का आन्दोलन करते हुए १९२६ में दिल्ली में शहीद हुए। मुसलमानों की धर्मान्धता ने म० राजपाल को भी १९२९ में अपना शिकार बनाया।

साहित्य द्वारा वेद-प्रचार करने के लिए सभा के अधीन १८९८ से सर्वसाधारण के लाभार्थ एक पुस्तकालय चल रहा है।

सभा का दूसरा मुख्य कार्य शिक्षा का प्रसार रहा है। ऋषि के निर्वाण के एक सप्ताह पश्चात् ही डी० ए० वी० कालेज की स्थापना का प्रस्ताव प्रस्तुत हो गया। इस स्मारक का उद्देश्य यह था कि इसमें वेद-विद्या और संस्कृत भाषा पढ़ाई जाय। जीवकोपार्जन और पाश्चात्य विद्याओं की प्राप्ति के लिये अंग्रेज़ी भी पढ़ाई जाय। १ जून १८८६ को डी० ए० वी० स्कूल की स्थापना का यज्ञ किया गया। एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर दस श्रेणियाँ खोल दी गईं। १८८७ में ५०५ विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे। १८८९ में एफ० ए०, १८९४ में बी० ए० तथा १८९५ में एम० ए० की श्रेणियाँ खोल दी गईं। ला० हंसराज पहले स्कूल के हैडमास्टर और कालेज खुलने पर उसके प्रिंसिपल बने।

जहाँ बालकों की शिक्षा के लिए लाहौर में डी० ए० वी० कालेज की स्थापना हुई वहाँ स्त्री-शिक्षा के लिए १८९० में जलन्धर में कन्या-पाठशाला खोले जाने का प्रस्ताव प्रस्तुत हो रहा था। यही पाठशाला आगे चल कर शीघ्र ही कन्या महाविद्यालय जलन्धर के रूप में विकसित हुई। इसके कर्त्ता-धर्त्ता ला० देवराज थे।

डी० ए० वी० कालेज की पढ़ाई से कई लोग प्रसन्न न थे। वे इस संस्था में ऋषि द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के आदर्श को नहीं देखते थे। इस मत-भिन्नता के साथ-साथ अन्य भी कई एक कारण थे जिन्होंने आर्यसमाज को दो विभागों में विभाजित कर दिया। कालेज की शिक्षा के विरुद्ध आवाज़ उठाने वाले आर्यसमाज के सिद्धान्तों में दृढ़ विश्वास रखते थे, अतः वे 'धर्मात्मा' वा 'महात्मा' दल के नाम से और कुछ समय पश्चात् 'गुरुकुल विभाग' के नाम से प्रख्यात हुए। जो लोग कालेज की शिक्षा से सन्तुष्ट थे वे उदार विचार के लोग थे, ऋषि के सिद्धान्तों से कुछ इधर-उधर होने में कोई विशेष सिद्धान्त-हानि नहीं समझते थे। वे मांस-भक्षण के कट्टर विरोधी नहीं थे। यह समुदाय 'कालेज विभाग' के नाम से प्रख्यात हुआ। समाज में

इन दोनों दलों का आविर्भाव १८६४ में हुआ। १८६७ में पं० लेखराम की मृत्यु पर यद्यपि ये दोनों दल पुनः मिल गए परन्तु छः मास पश्चात् ही फिर से पृथक् हो गए।

'महात्मा' दल कालेज की शिक्षा से असन्तुष्ट था। अब यह दल आर्ष प्रणाली द्वारा बालकों को शिक्षा देने की सोच में लगा। १८६७ में गुरुकुल की स्थापना के लिये आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। १६ मई १६०० में गुजराँवाला में सामयिक रूप से गुरुकुल की स्थापना कर दी गई। यहाँ सभा ने पहले ही एक आर्योपदेशक पाठशाला खोल रखी थी। कुछ काल के अनन्तर मुंशी अमनसिंह ने हरिद्वार के समीप काँगड़ी नामक ग्राम गुरुकुल को अर्पण किया। ४ मार्च १६०२ को गुरुकुल को काँगड़ी लाया गया। गुरुकुल के आन्दोलन, स्थापना तथा संचालन का श्रेय महात्मा मुंशीराम को ही प्राप्त है। गुरुकुल शिक्षा की विशेषता प्राच्य तथा पौरस्त्य शिक्षा का सम्मिश्रण तथा ब्रह्मचर्य का पालन था। १६१७ में महात्मा मुंशीराम ने संन्यास लेकर गुरुकुल से विदाई ली। महात्मा जी के पश्चात् आचार्य रामदेव मुख्य रूप में गुरुकुल का संचालन करते रहे।

बालकों की शिक्षा के लिये गुरुकुल की स्थापना करके स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में सभा ने विचार किया। यह कार्य कुछ वर्षों के अनन्तर कार्यरूप में परिणत हुआ। १६२३ में कन्या-गुरुकुल की स्थापना देहली नगर में दरियागंज मुहल्ले में हुई। कुछ वर्षों के पश्चात् यह गुरुकुल देहरादून लाया गया। इसके मुख्याधिष्ठाता आचार्य रामदेव तथा आचार्या श्रीमती विद्यावती सेठ हैं।

उपदेशकों की ट्रेनिंग के लिये १६२५ में सभा ने दयानन्द-उपदेशक विद्यालय की स्थापना की। श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने इसके स्थिर कोष के लिए एक लाख रुपया एकत्र कर दिया। प्रारम्भ से १६३५ तक श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी संस्था के आचार्य रहे।

सभा के कार्य-कर्त्ताओं के परिचय के लिए प्रारम्भ से लेकर अब तक मन्त्री तथा प्रधान महानुभावों की नामावली दी जाती है—

वर्ष	प्रधान	मन्त्री
१८८६	ला० साईंदास	ला० मदनसिंह
१८८७	,,	ला० जीवनदास
१८८८	,,	ला० मुरलीधर
१८८६	,,	,,
१८६०	ला० ईश्वरदास	,,
१८६१	ला० हंसराज	ला० ईश्वरदास
१८६२	ला० मुंशीराम	ला० दुर्गाप्रसाद

१८६३	ला० मुंशीराम	ला० आत्माराम
१८६४	,,	,,
१८६५	,,	,,
१८६६	ला० रामकिशन	ला० जयचन्द्र
१८६७	ला० मुंशीराम	,,
१८६८	ला० रलाराम	ला० खुशाबीराम
१८६६	ला० मुंशीराम	प्रो० शिवदयालु
१६००	ला० रलाराम	,,
१६०१	ला० मुंशीराम	ला० मुरलीधर
१६०२	पं० रामभजदत्त	ला० केदारनाथ
१६०३	राय ठाकुरदत्त धवन	,,
१६०४	ला० मुंशीराम	ला० रोशनलाल
१६०५	ला० रामकृष्ण	ला० केदारनाथ
१६०६	,,	,,
१६०७	,,	,,
१६०८	,,	डा० चिरंजीव
१६०६	,,	,,
१६१०	,,	ला० केदारनाथ
१६११	,,	,,
१६१२	,,	,,
१६१३	,,	,,
१६१४	,,	म० कृष्ण
१६१५	,,	,,
१६१६	,,	,,
१६१७	,,	,,
१६१८	,,	ला० धर्मचन्द
१६१६	पं० विश्वम्भरनाथ	पं० ठाकुरदत्त
१६२०	ला० रामकृष्ण	,,
१६२१	,,	,,
१६२२	,,	म० कृष्ण
१६२३	,,	,,

१६२४	ला० रामकृष्ण	म० कृष्ण
१६२५	,,	,,
१६२६	राय बहादुर बद्रीदास	,,
१६२७	,,	,,
१६२८	,,	पं० ठाकुरदत्त
१६२६	,,	,,
१६३०	,,	,,
१६३१	,,	म० कृष्ण
१६३२	,,	पं० भीमसेन
१६३३	,,	म० कृष्ण
१६३४	,,	,,
१६३५	आचार्य रामदेव	पं० भीमसेन

श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज के निम्न-लिखित शब्दों में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के गत ५० वर्षों के कार्य का विवरण किया है। उन स्फूर्ति-संचारी शब्दों के साथ इस सभा के अर्द्ध-शताब्दी समारोह का संक्षिप्त विवरण जनता के सामने रखते हैं—

"पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा एक ऐसी उत्तम संस्था है जिसकी जयन्ती मनाने में पंजाबियों को ही क्या सारे भारतवासियों को अपना गौरव समझना चाहिए और हर्षित होना चाहिए। यह संस्था जहाँ बहुत पुरानी है वहाँ भारत देश में नई रोशनी को लाने में इसने बहुत ज्यादा काम किया है। यदि इतिहास की नज़र से देखा जाय तो भारत में सबसे पहले इसी सभा ने अपने उत्तम नियमों और उपनियमों द्वारा जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के बहुमत से काम करना आरम्भ किया था। इस सभा से पहले इतना उत्तम संगठन भारत की अन्य किसी भी संस्था का नहीं था और न ही अन्य किसी हिन्दुस्तानी संस्था में जनता के प्रतिनिधियों के बहुमत का इतना मान्य होता था।

"जिस प्रतिनिधि सभा ने इतने उत्तम सुधार किये हैं, जिसने जनता में ब्रह्मचर्य का प्रचार किया है, जिसने लोगों में संघ-शक्ति और मेल-मिलाप का भाव बढ़ाया है, जिसने भारतवासियों को आत्म-सम्मान का ख़याल दिया है और अन्य अनेक उत्तम कार्यों के साथ गुरुकुल काँगड़ी-जैसी शानदार संस्था क़ायम की है उस सभा की सुवर्ण-जयन्ती मनाना हर्ष और गौरव दोनों की बात है।

"मैंने इस सभा के साथ सहयोग देकर अपने जीवन के एक अच्छे भाग को जन-सेवा में लगाया है जिसकी स्मृति मुझे सदा प्रसन्नता देती रहेगी। उस सभा की सुवर्ण-जयन्ती मनाने के समय पर मैं पञ्जाब के आर्यसामजिक जगत् को तह-ए-दिल से बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि आर्य संसार इस अवसर से नवजीवन और नवीन उत्साह ग्रहण करेगा।"
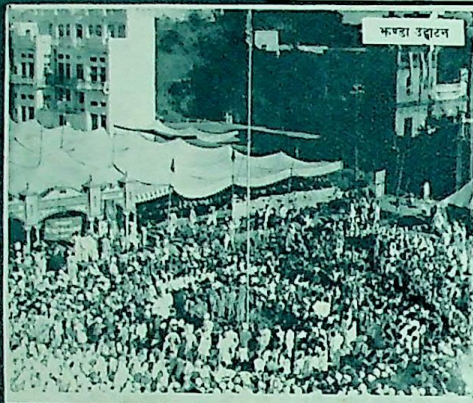
अर्द्ध शताब्दी आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब

सं० १९९२ वि०　　**कुछ दृश्य**　　सन १९३६ ई०

झण्डा उद्घाटन

आर्य वृद्ध सम्मेलन

गुरुदत्त भवन

आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब के अधिकारी तथा कर्मचारी

जलूस कचहरी रोड पर

जलूस कचहरी रोड पर

जलूस लोहारी गेट में

जलूस-लोहारी गेट में
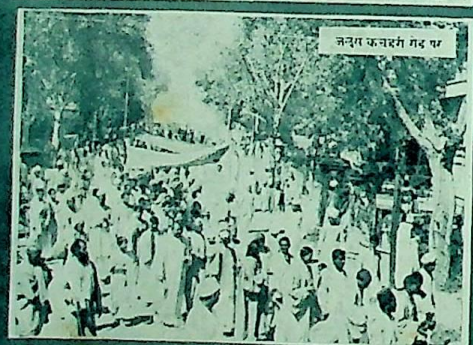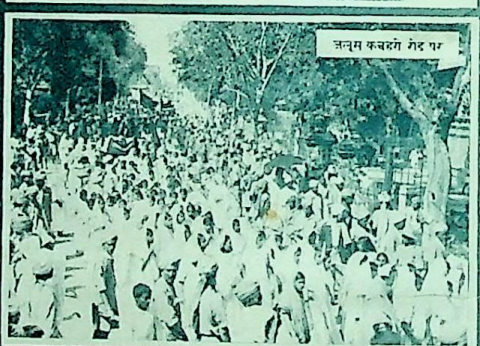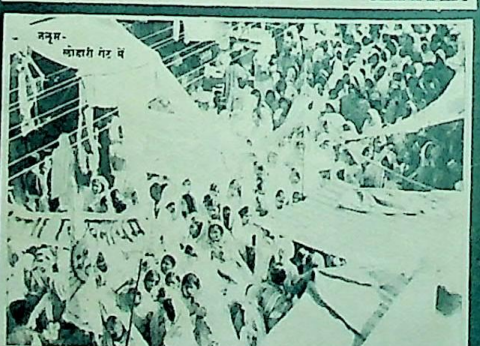
अवतरणिका

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का विचार १९३२ ई० में आर्य सज्जनों के हृदय में उत्पन्न हुआ। २६–२७ नवम्बर १९३२ में मनाए जानेवाले आर्यसमाज बच्छोवाली लाहौर के उत्सव पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से एक अधिवेशन बुलाया गया। इस अधिवेशन में दो विषय विचारार्थ उपस्थित थे। प्रथम विषय तो 'आर्यसमाज का भावी कार्य-क्रम' था। द्वितीय विषय यह था कि 'आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी १९३५ में मनाई जावे।' सभा के अन्तरंग सदस्यों तथा आर्यसमाज के मुख्य कार्यकर्त्ताओं को इस अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण दिया गया। यह अधिवेशन १२ मार्गशीर्ष १९८९ तदनुसार २६ नवम्बर १९३२ को रात्रि ७-४५ बजे दयानन्द-उपदेशक विद्यालय की बिल्डिंग में हुआ। श्री पं० विश्वम्भरनाथ जी सभा-उपप्रधान के सभापतित्व में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का विषय पेश हुआ। श्री पं० बुद्धदेव जी ने ला० लभूराम जी के अनुमोदन से प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे। श्री डा० खानचन्द देव जी ने श्री रामनारायण जी के अनुमोदन से इस प्रस्ताव का विरोध किया। बहुसम्मति से निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे। फिर यह निश्चय हुआ कि सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का प्रोग्राम सभा-मन्त्री अपनी सम्मति के अनुसार लिख कर आर्यसमाजों को भेजें और आर्यसमाजों को लिखा जावे कि वह अपने आर्यसमाज की सम्मति लेकर लिखें कि इस प्रोग्राम में क्या घटाव-बढ़ाव करना चाहते हैं।

आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब ने अपनी अन्तरङ्ग-सभा ४–९–१९८९ वि० तदनुसार १२–१२–१९३२ ई० के प्रस्ताव सं० ५ द्वारा निश्चय किया कि सं० १९९२ वि० तदनुसार १९३५ ई० में सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे और उसके लिए प्रबन्ध तथा कार्य-क्रम पर विचार करने के लिए श्री सभा-मन्त्री, पं० विश्वम्भरनाथ, पं० ठाकुरदत्त, पं० बुद्धदेव और ला० अर्जुनदेव की उपसभा बनाई जावे।

अर्द्ध शताब्दी आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब
कुछ दृश्य

अवतरणिका

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का विचार १६३२ ई० में आर्य सज्जनों के हृदय में उत्पन्न हुआ। २६–२७ नवम्बर १६३२ में मनाए जानेवाले आर्यसमाज वच्छोवाली लाहौर के उत्सव पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से एक अधिवेशन बुलाया गया। इस अधिवेशन में दो विषय विचारार्थ उपस्थित थे। प्रथम विषय तो 'आर्यसमाज का भावी कार्य-क्रम' था। द्वितीय विषय यह था कि 'आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी १६३५ में मनाई जावे।' सभा के अन्तरंग सदस्यों तथा आर्यसमाज के मुख्य कार्यकर्त्ताओं को इस अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण दिया गया। यह अधिवेशन १२ मार्गशीर्ष १६८६ तदनुसार २६ नवम्बर १६३२ को रात्रि ७-४५ बजे दयानन्द-उपदेशक विद्यालय की बिल्डिंग में हुआ। श्री पं० विश्वम्भरनाथ जी सभा-उपप्रधान के सभापतित्व में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का विषय पेश हुआ। श्री पं० बुद्धदेव जी ने ला० लभूराम जी के अनुमोदन से प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे। श्री डा० खानचन्द देव जी ने श्री रामनारायण जी के अनुमोदन से इस प्रस्ताव का विरोध किया। बहुसम्मति से निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे। फिर यह निश्चय हुआ कि सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का प्रोग्राम सभा-मन्त्री अपनी सम्मति के अनुसार लिख कर आर्यसमाजों को भेजें और आर्यसमाजों को लिखा जावे कि वह अपने आर्यसमाज की सम्मति लेकर लिखें कि इस प्रोग्राम में क्या घटाव-बढ़ाव करना चाहते हैं।

आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब ने अपनी अन्तरङ्ग-सभा ४–६–१६८६ वि० तदनुसार १२–१२–१६३२ ई० के प्रस्ताव सं० ५ द्वारा निश्चय किया कि सं० १६६२ वि० तदनुसार १६३५ ई० में सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाई जावे और उसके लिए प्रबन्ध तथा कार्य-क्रम पर विचार करने के लिए श्री सभा-मन्त्री, पं० विश्वम्भरनाथ, पं० ठाकुरदत्त, पं० बुद्धदेव और ला० अर्जुनदेव की उपसभा बनाई जावे।

सभा अर्द्ध-शताब्दी विवरण

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरंग सभा तिथि ३१–१–९१ वि० तदनुसार १३–५–३४ ई० (प्रस्ताव नं० ५) में सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का विषय पेश हुआ और निश्चय हुआ कि निम्न प्रस्ताव साधारण सभा में स्वीकृति के लिये पेश किया जावे।

(क) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी नवम्बर या दिसम्बर १९३५ ई० में जो समय अनुकूल हो मनाई जावे।

(ख) इस उपलक्ष्य में वेद-प्रचार स्थिर कोष के लिये न्यून से न्यून ढाई लाख रुपया एकत्र किया जावे।

(ग) यह सभा पंजाब, सीमाप्रान्त, बिलोचिस्तान, जम्मू कश्मीर तथा अन्य रियासतों के प्रत्येक आर्य से यह आशा रखती है कि इस निधि में यथा-शक्ति अवश्य दान देगा।

(घ) अर्द्ध-शताब्दी के व्ययार्थ इस वर्ष के बजट में ५०००) रखा जावे।

उपर्युक्त अन्तरंग सभा का प्रस्ताव साधारण सभा तिथि १३–२–९१ वि० तदनुसार २६–५–३४ प्रस्ताव सं० ५ द्वारा स्वीकृत हुआ।

अन्तरंग सभा तिथि २९–६–९१ वि० तदनुसार १४–१०–३४ ई० प्रस्ताव सं० ७ में निम्न सज्जनों की एक उपसभा बनाई गई।

१. आचार्य रामदेव (अध्यक्ष), २. म० कृष्ण, ३. पं० विश्वम्भर नाथ, ४. पं० भीमसेन, ५. पं० ठाकुरदत्त, ६. प्रो० शिवदयालु, ७. पं० चमूपति, ८. पं० बुद्धदेव, ९. पं० ज्ञानचन्द, १०. ला० गुरदित्ताराम ११. श्री अमृतराय।

यह उपसभा सभा की अर्द्ध-शताब्दी मनाने का प्रबन्ध करे और अर्द्ध-शताब्दी के कार्य-क्रम का ब्योरा उपस्थित करे। इस अर्द्ध-शताब्दी समिति का अधिवेशन २५–७–९१ वि० तदनुसार १०–११–३४ ई० ४ बजे सायं हुआ। इसमें निम्न निश्चय हुए—

१. अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर प्रदर्शन (Demonstration) का प्रोग्राम रखा जाय।
२. निम्न-लिखित कार्यों के लिये ढाई लाख रुपया लगाया जाय जिसकी अपील करने का निश्चय सभा ने किया हुआ है।
   (क) वेद-प्रचार स्थिर कोष।
   (ख) वैदिक अनुसन्धान।
   (ग) आर्य मिशन कम्पौंड तथा मैडिकल मिशन।
   (घ) ग्रामों में आर्यसमाज स्थापनार्थ सहायता।

निश्चय हुआ कि इस ढाई लाख रुपया में से एक लाख वेद-प्रचार स्थिर कोष के लिए रखा जाय और शेष धन बराबर-बराबर शेष तीन कार्यों में बाँटा जाय, किन्तु जो दान किसी विशेष कार्य के लिये मिले वह उसी कार्य पर लगाया जाय।

यह आयोजना अन्तरंग सभा २६–७–६१ वि० तदनुसार ११–११–३४ ई० प्रस्ताव सं० ३ द्वारा स्वीकृत हुई।

अन्तरंग सभा तिथि २–६–६१ वि० तदनुसार १६–१२–३४ प्रस्ताव सं० २ द्वारा निश्चय हुआ कि सभा की अर्द्ध-शताब्दी दिसम्बर १६३५ में मनाई जावे।

पुनः अर्द्ध-शताब्दी समिति का अधिवेशन ११–११–११६१ वि० तदनुसार २२–२–३५ ई० को हुआ। इस अधिवेशन में निम्न निश्चय किये गये।

(क) इस अवसर पर सारा समय काम करनेवाले वानप्रस्थियों का एक संघ बनाया जावे।

(ख) सभा का इतिहास तय्यार करके प्रकाशित किया जावे। जब इतिहास तय्यार हो जावे तो यह महानुभाव देख लें—१. ला० केदारनाथ, २. प्रो० शिवदयालु, ३. पं० विश्वम्भरनाथ, ४. म० कृष्ण, ५. ला० रामकृष्ण।

(ग) दयानन्द वचनामृत पुस्तक प्रकाशित किया जाय।

(घ) कम से कम एक लाख सत्यार्थप्रकाश बाँटा जाय।

अर्द्ध-शताब्दी समिति के स्थानिक सदस्यों का अधिवेशन १८–७–३५ ई० को ५ बजे सायं गुरुदत्त भवन लाहौर में हुआ। इसमें सभा के उपदेशक तथा अधिकारी भी सम्मिलित हुए।

पं० बुद्धदेव जी ने वैश्वानर याग की पद्धति सुनाई और स्वीकृत हुई।

निश्चय हुआ कि पं० ज्ञानचन्द जी को अर्द्ध-शताब्दी समिति का मन्त्री बनाया जाय।

निश्चय हुआ कि अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव दिसम्बर के अन्त में मनाया जावे और आर्य-समाज लाहौर को लिखा जाय कि वह अपने समाज का उत्सव अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव के साथ मनावें।

निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन तथा उससे सम्बद्ध गुरुकुलों, स्कूलों तथा कन्या-गुरुकुल के अध्यापकों, छात्रों, अध्यापिकाओं तथा छात्राओं को उस महोत्सव में भाग लेने के लिए निमन्त्रित किया जाय।

आर्यसमाज वच्छोवाली, लाहौर के मनोनीत सदस्यों तथा अर्द्ध-शताब्दी समिति के अधिकारियों की सम्मिलित बैठक ३ नवम्बर १६३५ को गुरुदत्त भवन में हुई। इसमें निम्न कार्य-वाही हुई।

(१) निश्चय हुआ कि विज्ञापन में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी और आर्यसमाज वच्छोवाली लाहौर का ५८वाँ उत्सव लिखा जावे।

(२) निश्चय हुआ कि आर्य सम्मेलन का स्वागताध्यक्ष लाहौर-समाज का प्रधान होगा।

(३) निश्चय हुआ कि महोत्सव की एक बैठक लाहौर-समाज का ५८वाँ उत्सव घोषित किया जाय।

(४) निश्चय हुआ कि ऋषि लंगर का प्रबन्ध यदि आर्यसमाज वच्छोवाली लेना चाहे तो ले ले।

(५) निश्चय हुआ कि जुलूस की सूचना पोलीस को आर्यसमाज वच्छोवाली लाहौर दे।

अर्द्ध-शताब्दी समिति की बैठक २४–७–९२ वि० तदनुसार ९–११–३५ ई० को हुई। इसमें निम्न निश्चय हुए।

निश्चय हुआ कि गुरुदत्त भवन में दो दिन दीपमाला की जाय और श्रद्धानन्द दिवस भी २८ दिसम्बर १९३५ को मनाया जाय।

ऋषि लंगर का विषय पेश हुआ, निश्चय हुआ कि आर्य वीर दल, उपदेशक तथा प्रतिष्ठित सज्जनों के भोजन का प्रबन्ध किया जावे। यदि वच्छोवाली लाहौर समाज अन्य प्रबन्ध करना चाहे तो कर ले।

निश्चय हुआ कि १४ से २० दिसम्बर तक अर्द्ध-शताब्दी सप्ताह मनाया जाय। सब समाजें २० दिसम्बर को अर्द्ध-शताब्दी दिवस मनावें। इन सात दिनों में प्रातः प्रभात फेरी और झोली से धन एकत्र किया जाय।

अर्द्ध-शताब्दी समिति का अधिवेशन ति० १६–९–९२ वि० तदनुसार ३०–१२–३५ को हुआ। इसमें कई अन्य बातों के अतिरिक्त यह निश्चय हुआ कि अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव पर एक स्वदेशी प्रदर्शिनी की जावे। शहीदों और महापुरुषों की वस्तुएँ एकत्र की जावें। पं० गुरुदत्त तथा पं० लेखराम के चित्र बनवाए जायें। ग़रीबी आदि के चार्ट बनवाए जायँ। कृषि विभाग, बन्दीघर विभाग तथा स्वास्थ्याधिकारियों को सहयोग देने की प्रार्थना की जाय। इस प्रदर्शिनी को ठेके पर दे दिया जाय और इस सम्बन्ध में कार्यवाही करने के लिए निम्न सभासदों की एक कमेटी बना दी जाय—

(क) पं० ठाकुरदत्त शर्मा—प्रधान, (ख) पं० ज्ञानचन्द्र, (ग) डा० ढल्लाराम, (घ) श्रीमान् निरञ्जननाथ (ङ) ला० हुकमचन्द (च) ला० काशीराम।

निश्चय हुआ कि आर्य नगर के लिए भूमि का निश्चय करने के लिए निम्न सज्जनों की उपसभा बना दी जाय—

(क) पं० ठाकुरदत्त शर्मा—प्रधान, (ख) ला० लब्भूराम—मन्त्री, (ग) डा० धर्मवीर, (घ) श्री अमृतराय, (ङ) पं० भीमसेन, (च) श्री राजेन्द्रकृष्ण कुमार।

प्रबन्ध

संवत् १९९१ के सभा के साधारण अधिवेशन में सभा की अर्द्ध-शताब्दी का मनाया जाना स्वीकार हुआ था। उसी समय अर्द्ध-शताब्दी मनाने की तय्यारियाँ प्रारम्भ हो गई थीं। पंजाब के आर्यसामाजिक समाचार-पत्रों में इसके सम्बन्ध में आन्दोलन होता रहा।

अन्तरंग सभा ने दिसम्बर १९३५ में क्रिसमस के दिनों में महोत्सव को मनाना स्वीकार किया था। इन दिनों शहीदगंज के आन्दोलन के कारण सिक्खों और मुसलमानों में वैमनस्य के भाव बढ़ रहे थे और इस कारण शहर का वातावरण अशान्त था। शहर में १४४ दफ़ा जारी की हुई थी। १३ दिसम्बर को आचार्य रामदेव सभा-प्रधान, प्रो० शिवदयालु, पं० ठाकुरदत्त शर्मा और पं० ज्ञानचन्द मन्त्री अर्द्ध-शताब्दी समिति लाहौर के डिप्टी कमिश्नर को मिले। डिप्टी कमिश्नर ने इन्हें आश्वासन दिलाया कि अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव एक धार्मिक उत्सव है अतः इसके मनाने में किसी प्रकार की अड़चन नहीं पड़ेगी। १५ दिसम्बर को पूछने पर सरकार से सूचना प्राप्त हुई कि जुलूस की स्वीकृति दे दी गई है। परन्तु अचानक १७ दिसम्बर को सिटी मैजिस्ट्रेट ने फ़ोन किया कि जुलूस नहीं निकल सकता। सभा की ओर से कहा गया कि उनके हज़ारों रुपये ख़र्च हो चुके हैं। बहुत से सज्जन विदेशों से भी महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए चल पड़े है। बहुत से पैदल चल कर आनेवाले यात्रियों ने अपनी यात्रा प्रारम्भ कर दी है। परन्तु चीफ़ सेक्रेटरी से लेकर सिटी मैजिस्ट्रेट तक किसी भी अधिकारी ने इन प्रश्नों का सन्तोष-जनक उत्तर न दिया। महोत्सव स्थगित कर दिया गया।

प्रथम निर्मित प्रोग्राम के अनुसार २५ दिसम्बर को जुलूस निकलना था। श्री सभा-प्रधान ने आज्ञा दी कि इसी दिन को प्रोटैस्ट दिवस मनाया जाय और सब आर्यसमाजें प्रोटैस्ट के प्रस्ताव की एक प्रति गवर्नमेंट को और एक सभा-कार्यालय में भेजें। आर्य-भाइयों

में सरकार की इस आज्ञा के विरुद्ध महान् असन्तोष था। कई आर्य वीर सत्याग्रह करने के लिए भी तय्यार थे, परन्तु बाहर के तात्कालिक वातावरण को दृष्टि में रखते हुए यही उचित समझा गया कि प्रतिवाद सभाएँ की जायें और उत्सव को स्थगित किया जाय। अन्तरंग सभा ने तिथि १६-१२-३५ को निम्न प्रस्ताव पास किया—

यह सभा, सभा की अर्द्ध-शताब्दी तथा आर्यसमाज (वच्छोवाली) लाहौर के वार्षिकोत्सव सम्बन्धी धार्मिक जुलूस तथा नगरकीर्तन निकालने के लिये पहले गवर्नमेंट के पूर्ण आश्वासन दिलाने के बावजूद अब आज्ञा न देने के विरुद्ध घोर प्रतिवाद करती है और समस्त आर्य-जनता को आदेश करती है कि इस सम्बन्ध में २५-१२-३५ को प्रतिवाद दिवस मनावें।

लाहौर में गुरुदत्त भवन में सभा हुई। पंजाब की आर्यसमाजों ने प्रतिवाद सभाएँ कीं।

पुनः १०, ११, १२, १३ एप्रिल १६३६ को अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव की तिथियाँ निश्चित हो गईं।

१६६१ के साधारण अधिवेशन में ढाई लाख रुपया एकत्र करने का प्रस्ताव पास हुआ था। इस राशि को एकत्र करने के लिए निम्न डैपूटेशन बन गए—

(१) आचार्य रामदेव, पं० ज्ञानचन्द्र और पं० बुद्धदेव का डैपूटेशन अम्बाला, बस्सी, शाहाबाद, लाडवा, पानीपत, कैथल, करनाल, कालका, कसौली, डगशई, सपाटू और शिमला गया। आचार्य रामदेव, पं० ज्ञानचन्द, स्वामी वेदानन्द और पं० मुक्तिराम का डैपूटेशन रावलपिण्डी, कोहमरी और पिशावर गया। आचार्य रामदेव, पं० ज्ञानचन्द और म० चिरञ्जीलाल 'प्रेम' का डैपूटेशन डलहौजी, घण्डराँ और पठानकोट गया।

(२) पं० बनवारीलाल, पं० पूर्णचन्द और पं० दीवानचन्द का डैपूटेशन अमृतसर और मजीठा पहुँचा। पं० बनवारीलाल और पं० पूर्णचन्द सियालकोट तथा जम्मूँ भी गये।

(३) पं० भीमसेन, पं० देवशर्मा और स० आयासिंह का डैपूटेशन झंग में गया।

(४) स्वामी सेवकानन्द, स्वामी रुद्रानन्द और पं० शान्तिप्रकाश के डैपूटेशन ने मुजफ्फ़रगढ़ और डेरागाजीखाँ के जिलों में कार्य किया।

(५) मुंशी गोपालसिंह और पं० बालमुकुन्द के डैपूटेशन ने गुजरात और जेहलम के जिलों में कार्य किया।

(६) पं० बुद्धदेव और स्वामी वेदानन्द का डैपूटेशन कराची गया।

सभा के समस्त उपदेशकों ने धन संग्रह के कार्य में भरसक प्रयत्न किया। पं० यशःपाल लुधियाना, जलन्धर आदि ज़िलों में तथा पं० प्रियव्रत नाभा, बरनाला, संगरूर, जड़ावाला, टोबाटेकसिंह, गोजरा, कसूर, भटिंडा के इलाक़े में धन संग्रह करते रहे। इसी प्रकार सभी उपदेशक महानुभाव अपने-अपने इलाक़े में धन संग्रह करते रहे।

इस महोत्सव के उपलक्ष्य में 'वैश्वानर-याग' नामक एक यज्ञ-पद्धति तय्यार की गई और सभा के आदेशानुसार उपदेशक महानुभाव परिवारों में यज्ञ कराते रहे और १) प्रति पुरुष, ॥) प्रति स्त्री और ।) प्रति बाल के हिसाब से दक्षिणा प्राप्त करके अर्द्ध-शताब्दी निधि में जमा करवाते रहे। इस यज्ञ से भी पुष्कल धन-राशि का संग्रह हो गया। इस याग की पद्धति निम्न है—

यजमान संस्कार विधि के अनुसार समन्त्र आचमन और अंगस्पर्श करे। पश्चात् निम्न वाक्य उच्चारण करके यजमान वैश्वानर-याग करने का संकल्प करे—

ओ३म् तत् सत् श्रीब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वते मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे श्रीविक्रमार्कस्य द्विनवत्युत्तरैकोनविंशतिशततमे वर्षे दक्षिणे/उत्तरे ऽयने........मासे शुक्ले/कृष्णे पक्षे....वारे....नक्षत्रे....लग्ने....मुहूर्त्ते विलुप्तवैदिकमर्यादा-पुनरुद्धारकमन्त्रदृगग्रगण्यप्रतिवादिभयंकरयावद्वैदिकवाङ्मयपारावारपारीणमहर्षिदयानन्दप्रतिष्ठापितार्यसमाजचक्रनाभिभूतपञ्चनदीयार्यप्रतिनिधिसभायाः पञ्चाशद्वर्षपर्यन्तमनवच्छिन्न-प्रचारसत्रोत्सवनिर्वर्तनार्थं वैश्वानरयागमहं करिष्ये।

पुनः निम्न वाक्य से यजमान ऋत्विक् को आसन पर विराजमान होने के लिए प्रार्थना करे—

यजमान—ओमावसोः सदने सीद।

निम्न वाक्य का उच्चारण करके ऋत्विक् आसन पर बैठ जावे—

ऋत्विक्—ओं सीदामि।

निम्न वाक्य को बोलकर यजमान यज्ञ-कर्म करने के लिए ऋत्विक् का वरण करे—

यजमान—अहमद्य वैश्वानरयागनिर्वहणाय भवन्तं ऋत्विजं वृणे।

निम्न वाक्य का उच्चारण करके ऋत्विक् यजमान की वरण-प्रार्थना स्वीकार करे—

ऋत्विक्—ओं वृतोऽस्मि।

निम्न वाक्य का उच्चारण करके ऋत्विक् यजमान से पूछे कि आपको यज्ञ-कर्म में किसने नियुक्त किया है—

ऋत्विक्—कस्त्वा युनक्ति।

निम्न वाक्य से यजमान उत्तर दे कि श्रीमान् ने मुझे यज्ञ-कर्म के लिये नियुक्त किया है:—

यजमान—भवान् मा युनक्ति।

निम्न वाक्य से ऋत्विक् उत्तर दे कि हम दोनों को यज्ञ-कर्म के लिये सभा ने नियुक्त किया है—

सभा त्वा युनक्ति सभा मा युनक्ति।

ऋत्विग्वरण के पश्चात् ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना के आठ मन्त्र पढ़े। फिर समन्त्र अग्न्याधीन और समिधाधान करे। "ओ३म् अयन्त इध्म आत्मा" मन्त्र से ५ घृत की आहुति देवे और फिर वेदी के चारों ओर समन्त्र जल छिड़का दे। ४ आघारवाज्यभागाहुति और ४ व्याहृति की आहुतियाँ दे। तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत और सामग्री की वैश्वानर-याग की विशेष आहुतियाँ देवे।

१—ओ३म्। दृते दृᳫंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥ यजु० ३६।१८

२—उत्तिष्ठत सं नह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत॥ अथर्व० ११।१०।१

३—इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्णः॥ ऋ० ६।६३।५

४—अच्छिन्नस्य ते देव सोम सुवीर्यस्य रायस्पोषस्य ददितारः स्याम। सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा स प्रथमो वरुणो मित्रो अग्निः॥ यजु० ७।१४

५—यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति। जो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥ ऋ० ५।४४।१४

६—वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः। अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम॥ अ० १२।२।२८

७—उदीचीनैः पथिभिर्वायुमद्भिरतिक्रामन्तोऽवरान् परेभिः। त्रिः सप्त कृत्व ऋषयः परेता मृत्युं प्रत्यौहन् पदयोपनेन॥ अ० १२।२।२९

८—मृत्योः पदं योपयन्त एत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः। आसीना मृत्युं नुदता सधस्थेथ जीवासो विदथमा वदेम॥ अ० १२।२।३०

९—या ओषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताः पृथिवीमनु।
बृहस्पतिप्रसूता अस्यै सं दत्त वीर्यम्॥ ऋ० १०।९७।१९

१०—प्रभ्राजमानां हरिणीं यशसा संपरीवृताम्।
पुरं हिरण्ययीं ब्रह्मा विवेशापराजिताम्॥ अ० १०।२।३३

११—आयने ते परायणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः। उत्सो वा तत्र जायतां ह्रदो वा पुण्डरीकवान्॥ अ० ६।१०६।१

१२—धरुण्यसि शाले बृहच्छन्दाः पूतिधान्या। आ त्वा वत्सो गमेदा कुमार आ धेनवः सायमास्पन्दमानाः॥ अ० ३।१२।३

१३—मानस्य पत्नि शरणा स्योना देवी देवेभिर्निमितास्यग्रे। तृणं वसाना सुमना असस्त्वमथास्मभ्यं सहवीरं रयिं दाः॥ अ० ३।१२।५

१४—सभा च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने येना संगच्छा उप मा स शिक्षाचारु वदानि पितरः सङ्गतेषु॥ अ० ७।१२।१

१५—संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते॥ ऋ० १०।१६१।२

१६—समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥ ऋ० १०।१६१।३

निम्न एक मन्त्र त्र्यम्बकम्० से मिष्टान्न—हलुवा, खीर वा लड्डू की आहुति दे—

१७—त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनं। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥ यजु० ३।६०

१८—आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥ यजु० २२.२२

यदि याग प्रातःकाल कर रहे हों तो "ओ३म् सूर्यो ज्योतिः" आदि चार मन्त्रों से और यदि सायंकाल कर रहे हों तो "ओ३म् अग्निर्ज्योतिः" आदि चार मन्त्रों से घृत तथा सामग्री की आहुतियाँ दें। पुनः "ओं भूरग्नये प्राणाय" आदि ८ मन्त्रों से दोनों समय आहुति दें। पूर्णाहुति के पश्चात् शान्ति पाठ करें।

अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव के अन्तिम दिवस १३ एप्रिल १९३६ को उद्घोषित किया गया कि अर्द्ध-शताब्दी में प्राप्त तथा प्रतिज्ञा धन कुल १३४५००) संग्रह हुआ है। इस राशि में से ६२५००) प्राप्त हो चुका है। एक सज्जन ने वेद-भाष्य के लिए जब तक यह कार्य जारी रहे ४०) मासिक देना स्वीकार किया है। आर्यसमाज वच्छोवाली लाहौर के ५८वें वार्षिक उत्सव के सिलसिले में २५५००) प्राप्त हुआ है। इसमें से ६०००) स्त्री-समाज ने एकत्र किया है। अपील पर कुल ३०००) प्राप्त हुआ।

इस महोत्सव के उपलक्ष्य में 'आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचित्र इतिहास' प्रका-

शित हुआ। इसके अतिरिक्त 'दयानन्द रत्न माला' नामक पुस्तिका प्रकाशित हुई। इसमें ऋषि दयानन्द के सार्वजनिक वाक्यों का आर्यसमाज के दस नियमों के अनुसार संग्रह किया गया। इसका अंग्रेजी संस्करण Immortal Sayings of Dayanand भी प्रकाशित हुआ।

इस महोत्सव पर अन्य प्रदर्शनों के अतिरिक्त शारीरिक व्यायाम और खेलों का भी आयोजन किया गया।

इस अवसर पर हाकी, फ़ुटबाल, वालीबाल, गतका आदि के मैच हुए। इस में निम्न टीमों ने भाग लिया—

(१) जाली फ्रैण्डज़
(२) जाली पैरेडज़
(३) पैरेडज़
(४) फ्रैंडज़
(५) लोको शैड
(६) पंजाब राईफ़ल्ज़
(७) सैंट एंथानी स्कूल
(८) रेलवे रीक्रीएटर
(९) मुग़लपुरा A & B
(१०) गुरुकुल काँगड़ी

स्कूल की हाकी टीमें

(१) गुरुकुल गुजराँवाला
(२) डी० ए० वी० हाई स्कूल मिण्टगुमरी
(३) आर्य हाई स्कूल लुधियाना
(४) आर्य हाई स्कूल जलन्धर शहर
(५) दयालसिंह हाई स्कूल
(६) आर्य हाई स्कूल सियालकोट
(७) ,, ,, भूपालवाला
(८) गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ
(९) डी० ए० वी० हाई स्कूल लाहौर
(१०) कैण्ट हाई स्कूल लाहौर छावनी

फुटबाल टीमें

(१) डी० ए० वी० हाई स्कूल मिण्टगुमरी
(२) आर्य हाई स्कूल लुधियाना
(३) डी० ए० वी० हाई स्कूल लाहौर

गतका

(१) डी० ए० वी० हाई स्कूल मिण्टगुमरी
(२) आर्य हाई स्कूल लुधियाना
(३) डी० ए० वी० हाई स्कूल अमृतसर
(४) बालमुकुन्द खत्री हाई स्कूल अमृतसर

वालीबाल

(१) आर्य हाई स्कूल चूहड़मुंडा
(२) डी० ए० वी० स्कूल अमृतसर
(३) आर्य हाई स्कूल सियालकोट
(४) डी० एम० स्कूल मोगा
(५) गुरुकुल गुजराँवाला
(६) डी० ए० वी० स्कूल मिण्टगुमरी
(७) आर्य हाई स्कूल लुधियाना

खेलों के प्रबन्ध के लिए श्री देशराज (डी० एम० कालेज मोगा), और श्री पृथिवीराज (ए० जी० आफ़िस) का परिश्रम सराहनीय है।

महोत्सव के अवसर पर गुरुकुल काँगड़ी और गुरुकुल कुरुक्षेत्र के ब्रह्मचारियों ने खेलें दिखलाईं। कन्या गुरुकुल देहरादून और कन्या महाविद्यालय जलन्धर की छात्राओं ने महिला-सम्मेलन के अवसर पर अपनी खेलें दिखलाईं।

आर्य वीर-दल

इस महोत्सव के अवसर पर एक संगठित आर्य वीर दल की स्थापना हुई। दलपति ला० हरदयाल बी. ए. रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट इन्सपैक्टर आफ़ स्कूलज़ ने बड़े परिश्रम से विविध नगरों में घूम कर के आर्य वीर दल को संगठित किया। महोत्सव के अवसर पर पण्डाल, जुलूस, पूछ-ताछ (इन्कायरी) कार्यालय, औषधालय, ऋषिलंगर और पैहरा आदि के कार्यों में आर्य वीरों ने प्रशंसनीय कार्य किया। आर्य वीरों के अतिरिक्त आर्य वीरांगनाओं ने भी सेवा का कार्य किया। श्रीमती सीतादेवी धर्मपत्नी ला० छबीलदास तथा श्रीमती यशोदा देवी

सुपुत्री डा० सत्यपाल ने बड़े परिश्रम से एक सौ के लगभग वीरांगनाओं का जत्था तय्यार किया।

महोत्सव मनाने के लिए गुरुदत्त भवन की विशाल ग्राऊंड में एक बड़ा भारी पण्डाल बनाया गया। इस में पन्द्रह हज़ार व्यक्ति बड़ी आसानी से बैठ सकते थे। इस पण्डाल को उत्तम बनाने में ला० हुकमचन्द और ला० सोहनलाल का प्रयत्न सराहनीय है। पण्डाल की सजावट का कार्य गुरुकुल कुरुक्षेत्र के ब्रह्मचारियों ने किया। श्री महादेव ने भी इस कार्य में सहयोग दिया।

महोत्सव में पधारे उपदेशक महानुभावों, प्रतिष्ठित व्यक्तियों और आर्य वीर दल के लिए ऋषि लंगर भी जारी किया गया। पं० शिवलाल ने बड़े सुचारु रूप से इसका प्रबन्ध किया। श्रीमती शिवलाल तथा श्रीमती पं० ठाकुरदत्त शर्मा इन दो महिलाओं ने अन्नादि सामग्री एकत्र करके ऋषि लंगर को दी।

उतारा के प्रबन्ध के लिए ला० ताराचन्द और बख्शी झण्डामल ने बड़ा काम किया। निम्न स्थानों में यात्रियों के उतारे का प्रबन्ध किया गया—

(१) डी० ए० वी० मिडिल स्कूल। इसमें परिवार सहित यात्री ठहरे।
(२) डी० ए० वी० हाई स्कूल। इसमें गुरुकुल काङ्गड़ी, इन्द्रप्रस्थ, कुरुक्षेत्र, कमालिया, जेहलम, गुजरांवाला तथा अनाथालय गुजराँवाला के ब्रह्मचारी ठहरे।
(३) डी० ए० वी० कालेज। इसमें डी० ए० वी० कालेज मोगा, आर्य हाई स्कूल लुधियाना, दुआबा हाई स्कूल जालन्धर, आर्य हाई स्कूल मिण्टगुमरी, आर्य हाई स्कूल नवाँशहर और आर्य हाई स्कूल सियालकोट के छात्र ठहरे।
(४) सरदार भगतसिंह खालसा हाई स्कूल। इस में कन्या गुरुकुल देहरादून, कन्या गुरुकुल हाथरस और कन्या महाविद्यालय जलन्धर की छात्राएँ ठहरीं। स्कूल की ग्राऊंड में कैम्पों में परिवार-सहित यात्री ठहरे।
(५) सनातनधर्म हाई स्कूल। इसमें अमृतसर, जलन्धर, लुधियाना, भटिण्डा, दिल्ली आदि ज़िलों के बिना परिवार के यात्री ठहरे।
(६) लाजपतराय भवन। इसमें कुछेक व्यक्ति ठहरे।
(७) चौमाला साहिब गुरुद्वारा। इसमें स्वयं-सेवक ठहरे।
(८) अरोड़वंश हाल। इसमें मुलतान, मिण्टगुमरी, ख़ानेवाल, सिन्ध आदि इलाकों के बिना परिवार के यात्री ठहरे।
(९) दयालसिंह हाई स्कूल। इसमें गुजराँवाला, सियालकोट, जम्मूँ, जेहलम, रावलपिण्डी, पेशावर, लायलपुर, शेख़ूपुरा के बिना परिवार के यात्री ठहरे।
(१०) आर्यसमाज वच्छोवाली। इसमें फ़ीरोजपुर की ओर के बिना परिवार के यात्री ठहरे।

पूछ-ताछ (Enquiry) का कार्य म० चूनीलाल तथा म० कुन्दनलाल ने बड़ी प्रीति से किया। महोत्सव के अवसर पर दो औषधालय (Dispensaries) खोले गए। इनमें डा० खुशीराम, डा० सुदर्शन, डा० धर्मप्रकाश और डा० डावर ने बड़े प्रेम से कार्य किया। ब्रह्मपारायण यज्ञ में श्रीमान् निरंजननाथ और पं० रेवतीप्रसाद ने कार्य किया।

एक दस-बारह व्यक्तियों का पैदल जत्था रामाँमण्डी से दिसम्बर १६३५ में होनेवाली अर्द्ध-शताब्दी में सम्मिलित होने के लिए चला। श्री स्वामी सदानन्द जी मियानी से पैदल चले। मुलतान से कुछ साइकल सवार तो लाहौर पहुँच ही गए। परन्तु दिसम्बर में महोत्सव के स्थगित हो जाने से उनको निराश होना पड़ा।

महोत्सव को अधिक रोचक बनाने के लिए इस अवसर पर एक स्वदेशी प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। ४ एप्रिल १६३६ को सायं ५॥ बजे सर डा० गोकुलचन्द नारंग ने इसका उद्घाटन किया। अर्द्ध-शताब्दी के दिनों में इसमें काफ़ी चहल-पहल रही। इसमें सरकारी शिल्प-विभाग की दुकानें भी लगी थीं। यह यात्रियों के मनोरञ्जन का एक अच्छा साधन था। महोत्सव के कुछ ही दिन पश्चात् तक यह प्रदर्शनी चली।

१२, १३ एप्रिल १६३६ इन दो रात्रियों को गुरुदत्त भवन में दीपावली की गई। ऋषि दयानन्द के चित्र के इर्द-गिर्द चक्र घूमने का दृश्य इस दीपावली में अत्यन्त आकर्षक था।

अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर उपहार रूप में लोगों को देने के लिये ऋषि दयानन्द का रंगीन चित्र, कैलेण्डर और बैज बनवाए गए थे। अर्द्ध-शताब्दी कैलेण्डर पर सभा के अब तक हुए प्रधान महोदयों के चित्र दिए गए।

यात्रियों की सुगमता के लिए दिसम्बर १६३५ और एप्रिल १६३६ में रेलवे से प्रार्थना की गई थी कि वे स्पेशल ट्रेनों का प्रबन्ध करें और उन्होंने हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया था। एप्रिल १०, ११, १२, १३ इन ईस्टर के दिनों में यद्यपि सरकारी दफ़्तरों आदि में छुट्टियाँ होती थीं तथापि कभी-कभी विशेष ड्यूटी लग जाती हैं। अतः सरकार से प्रार्थना की गई थी कि इन दिनों यदि कोई सज्जन अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव में सम्मिलित होना चाहे तो उसे अवकाश दिया जाय। सरकार ने भी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली थी।

समारोह

महोत्सव की २२ चैत्र १६६२ तदनुसार ३ एप्रिल १६३६ से लेकर २८ चैत्र १६६२ तदनुसार ६ एप्रिल १६३६ तक सत दिन पर्यन्त केवल प्रातः और सायं कार्यवाहि होती रही। और २६ चैत्र १६६२ तदनुसार १० एप्रिल १६३६ से २ वैशाख १६६३ तदनुसार १३ एप्रिल १६६३६ तक महोत्सव की मुख्य कार्यवाही हुई। प्रातः ५॥ से ६॥ बजे तक भक्त मंगनराम की मंडली प्रभु कीर्त्तन करती रही। ६॥ से ८॥ बजे तक ब्रह्मपारायण यज्ञ होता रहा।

शुक्रवार, २२ चैत्र, १६६२ तदनुसार ३ एप्रिल, १६३६

प्रातः ५॥ से ६॥ तक के शान्त तथा रमणीक समय में प्रभु कीर्त्तन से सभा का सुवर्ण जयन्ती महोत्सव प्रारम्भ हुआ। और प्रायः प्रातः कालीन प्रभु-कीर्त्तन में भक्त मंगतराम की मण्डली ही अधिक कार्य करती रही है।

इसके पश्चात् ६॥ बजे से ब्रह्म-पारायण यज्ञ का समारम्भ हुआ। स्मरण रहे कि यज्ञ, महोत्सव की दिसम्बर १६३५ की तिथियों में कुछ दिन होता रहा था। और सम्पूर्ण ऋग्वेद से यज्ञ हो चुका था। अब इस अवसर पर सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद शेष तीन वेदों का यज्ञ होना था। इस दिन के यजमान श्री रामप्रताप रिटायर्ड तहसीलदार थे। इन्होंने सामवेद से यज्ञ करवाया। इसके पश्चात् डा० रामजीनारायण (एग्रीकलचर कालेज लायलपुर) ने यजुर्वेद से यज्ञ करवाया। अथर्ववेद के यज्ञ में कई यजमान बने। १२ और १३ एप्रिल को कोहमरी नगर की एक प्रतिष्ठित देवी के प्रार्थना करने पर उनकी इच्छानुसार यजुर्वेद का फिर यज्ञ किया गया।

श्री पं० रेवतीप्रसाद पुरोहित आर्यसमाज वच्छोवाली (लाहौर) यज्ञ के पुरोहित थे। ८॥ बजे से ६॥ बजे तक पं० ईश्वरचन्द्र अध्यापक दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर का उपदेश हुआ। आपने यज्ञमय जीवन की व्याख्या की।

रात्रि ८॥ बजे पं० प्रियव्रत वेदवाचस्पति ने भाषण दिया। उन्होंने जनता का ध्यान

इस ओर आकर्षित किया कि उन्होंने लोगों को आर्य बनाने में अपने कर्त्तव्य का कहाँ तक पालन किया है।

शनिवार, २३ चैत्र, १९९२ तदनुसार ४ एप्रिल, १९३६

५॥ से ६॥ तक यथा-पूर्व प्रभु-कीर्त्तन हुआ। ब्रह्म-पारायण यज्ञ के अनन्तर ८॥ बजे आचार्य रामदेव सभा-प्रधान का यज्ञ की फ़िलासफ़ी पर बड़ा उत्तम और प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। उन्होंने बतलाया कि कर्त्तव्य-परायण होना ही यज्ञ-मय जीवन की अन्तिम सीढ़ी है।

५॥ बजे सायं डा० गोकुलचन्द नारंग, सचिव लोकल सैल्फ़ गवर्नमेंट पंजाब की अध्यक्षता में 'गोल्डन जुबली स्वदेशी नुमाइश' का उद्घाटन हुआ। इसमें आचार्य रामदेव और महात्मा हंसराज ने संक्षिप्त वक्तृताएँ दीं।

रात्रि ८ बजे के लगभग आचार्य रामदेव जी की ब्राडकास्ट वक्तृता हुई। यह वक्तृता लाहौर-निवासियों के लिए मनोरञ्जन का कारण थी। इसने संसार-भर में आर्यसमाज का संदेश पहुँचाया। यह वक्तृता नीचे दी जाती है—

To Aryandum

BROTHERS AND SISTERS,

The Arya Pratinidhi Sabha Punjab—the Representative Assembly of the Arya Samajes in the Punjab, Kashmir and other Punjab States, N. W. F. Province and British Baluchistan completes its fiftieth year now. It controls over 500 branches of the Arya Samaj in these parts.

The Arya Samaj is the most dynamic force in Aryandum to-day. Its founder, Mahrishi Dayananda, appeared on the stage at a time when the mechanistic explanation of the origin, continuity and dissolution of the universe held sway and the occident, aflush with triumphant victories in the domain of material science, eagerly listened to the alluring fairy tale that the human race began as a pack of savages and infinite progress is the rule in this universe The Vedas, being regarded as part of the oldest surviving records of primitive savagery, shared this discredit with other ancient scriptures. Swami Dayananda combated the whole philosophy udnerlying this comfortable and puffing belief, which was growing fashionable in his time. He re-asserted with a leonine voice his belief in a personal God, in immortality of the soul and in the infallibility of the Vedas. His task seemed hopeless. It appeared he was leading a forlorn hope.

What a tremendous revolution has occurred in the world of thought since his advent. Science, now, "positively asserts creative existence". According to Mcdonggal, the mechanistic explanation of the universe has gone the way of exploded theories. According to Macterlinck, the great Belgian philosopher and literateur, the Vedas present a conundrum which the Sphinx of Modern Thought finds it hard to solve. He exclaims with characteristic frankness and candour :—

"Whence did our pre-historic ancestors, in their supposedly terrible state of ignorance, arrive at these extraordinary intutions."

He even quotes Swami Dayanand. Thus it is clear that he was directly influenced by the teachings of the Master. Of course Tolosty was and Roman Rolland is being. The latter exclaims :—

(Swami Dayananda) "injected his leonine blood into the dry bones of Hinduism". I am quoting from memory. The transformation in India has, indeed, been miraculous. A despised and self-despising people, many of whom felt ashamed of their intellectual heritage and waited at the tables af their masters not only for the crumbs of petty clerkships but also for the discarded jejune scraps of the culture of their lords and masters—imitated to perfection but without any serious attempt at assimilation—have learnt to raise their heads with pride and can now meet their overlords as equals, proud of their heritage, scorning helotage of all descriptions and enthusiastic about their future.

Since the sound basis of patriotism is cultural, it may well be claimed that Swami Dayananda was responsible for the birth of the idea of political self-determination, as he doubtless was, of cultural self-determination. Of course it is well known that it was he who contributed the word swarajya to the dictionary of political phraseology.

The emancipated helots of society— prey to the social tyranny of the descendants of rishis who first proclaimed the equality of man and adored the sons ef erring mothers, fatherless because they could locate no one progenitor, as sages and hailed them as saviours because of their spiritual pre-eminence—. the despised virgin widow now treated humanely and regarded as an honoured member of society free to re-marry. the educated woman—resplendant with new charms and aglow with an elusive personality wearing the sacred thread as the symbol of intellectual and social enfranchisement—and thousands of boys and girls studying at school through their mother-tongue or through the lingua franca of India and celebrating their freedom from the clogs that retarded the wheels of mind machinery and turned good Indians into poor imitation Englishmen; all feel proud of the debt that they owe to the Arya Samaj, a debt which it is difficult to discharge.

That premier National University of India, the Gurukala at Kangri, enduring monument of Shradhananda's life-long self-sacrifice and of the self-effacing labours of two generations of self-less workers who worked with him or followed in his footsteps—the Kanya Gurukula at Dehradun which has given a new orientation to the aspirations and ambitions of budding womanhood and owes its inception to Shradhananda the great and its maintenance to that glory of womanhood the saintly Balbrahmacharini lady—educationist Vidyawati, the Veda Prachar Fund—owing its present position to Lalman, Arya Muni, Martyr Lakhram and Purnanand—which spreads the healing message of the Redeemer to the darkest corners of the Punjab and other parts of India and even greater India and the Updeshak Vidyalaya at Lahore which sends out earnest missionaries from year to year and is associated with the honoured names of revered Satyanand and ascetic Swatantranand were all founded and are maintained by this Sabha. The Kanya Mahavidyalaya at Jullundur—the pioneer of women's education in the Punjab and a monument of that great social reformer and educator Devraj of revered memory was started under the auspices of and with the blessings of this organisation. Even the D.A.V. College, at Lahare, which is the greatest monument of private educational enterprise in this Province and which has done so much to spread the knowledge of Hindi and Sanskrit in this land of outlandish culture and which owes its proud position to the unexampled self-sacrifice of Hans Raj, the stupendous learning and intellectual brilliance of the great genius Gurudatta, the strenuous labours of the prince of patriots Lajpatrai. the far-sighted wisdom of Lalchand and the loyal devotion of Dwarkadas and, most of all, to the patriarchical nursing of Saindas—was fostered, for a long time, by the Arya Pratinidhi Sabha, Punjab.

The Sabha founded by the combined labours of Saindas, Hansraj, Madan Singh, Lal Chand, Jiwan Das, Ishar Das, and many others, nurtured by the life-blood of Munshi Ram, Jai Chandra, Ram Krishan, Shiv Dayal, Ralla Ram, Piare Ram, Raimal, Thakur Datta, and Kedar Nath, maintained and even led on the forward march by the vigilance of Bishambar Nath, the propagandist zeal of Krishna, the princely donations and gifts of Suchet Singh, Kirpa Ram, and Thakur Datta, the missionary activities of Pandit Ganga Ram, the glorious uplift work of Lala Ganga Ram, the unceasing work of Labhu Ram and others and the cool-headed mature counsels of Badri Las and Makhan Lal—has moved from progress to progress.

May all right-minded patriots bless it and may the new schemes of rural re-construction, preparation and publication of an authorised version of the Vedas through the combined efforts of Vedic Scholars of Dayanada's school of thought and of the starting of Medical Missions,

Satsangs and Model colonies ;--by launching which the Sabha proposes to commemorate its Jubilee—receive the unstinted moral and material support not only of all patriotic Indians who are proud of the past of Aryavarta and hopeful of its future but also of those people abroad who, like Roman Rolland, regard this holy land, sanctified by the penance of Rishis and Munis, as their spiritual mother and of noble Europeans like Andrews who regard it as the land of their adoption and serve it faithfully.

May the Author of the Universe, the Inspirer of all Noble Endeavour, the Ocean of Grace and Mercy, shower His benedictions upon us His humble and erring servants working to augment His Glory.

भावार्थ—भाइयो तथा बहिनो ! आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब जोकि पञ्जाब, कश्मीर तथा अन्य पञ्जाब की रियासतों, उत्तर-पश्चिमीय सीमान्त प्रान्त और ब्रिटिश बिलोचिस्तान की आर्यसमाजों की प्रतिनिधि सभा है अब अपना पचासवाँ वर्ष पूर्ण कर रही है। इसका इन प्रदेशों में ५०० से अधिक आर्यसमाजों पर शासन है।

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने ऐसे समय में जन्म लिया जबकि लोग प्रकृति वाद की ओर झुक रहे थे और वेदादि शास्त्रों को जङ्गलियों की वार्त्ताएँ समझते थे। ऋषि ने इन आधुनिक विचारों के प्रति आन्दोलन किया और लोगों को ईश्वर, जीव और वेद के सत्य स्वरूप को बतलाया। ऋषि के आने से लोगों के विचारों में एक प्रकार की क्रान्ति-सी आ गई। मैकटरलिंक जैसे दार्शनिक कहने लग गए हैं कि वेदों की गम्भीर समस्याओं को साधारण लोग नहीं समझ सकते। रोमाँ रोलाँ का कहना है कि महर्षि ने हिन्दू-जाति में नवजीवन का सञ्चार कर दिया है।

इस जाति के लोग पहले जहाँ अंग्रेजों के पास उनकी संस्कृति का पाठ पढ़ने के लिए जाया करते थे वह अब ऋषि की कृपा से अपनी पैतृक संस्कृति पर गर्व करना सीख गए हैं। ऋषि ने लोगों को सांस्कृतिक तथा राजनीतिक स्वतन्त्रता के विचार दिये और राजनीतिक शब्द-शास्त्र को "स्वराज्य" शब्द दिया। आजकल क्या दास, क्या विधवाएँ, क्या पठित स्त्रियाँ और क्या बालक और बालिकाएँ सभी आर्यसमाज, जिसने उन पर इतना उपकार किया है, के प्रति कृतज्ञता प्रकट रहे हैं।

यह सभा गुरुकुल काँगड़ी, कन्या गुरुकुल देहरादून, वेद-प्रचार-निधि और दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर को चला रही है। कन्या महाविद्यालय जलन्धर तथा डी० ए० वी० कालेज लाहौर इस सभा ने ही स्थापित किए थे। यह सभा उत्तरोत्तर उन्नति के पथ जा रही है।

ईश्वर करे कि ग्राम सुधार, वेद-भाष्य, मैडीकल मिशन और आदर्श नगर—इन आयोजनाओं को, जिनको लेकर सभा अपनी सुवर्ण जयन्ती मना रही है, भारतीयों तथा अन्य भारत प्रशंसक बाहिर के लोगों का नैतिक तथा आर्थिक सहयोग प्राप्त हो।

वह परब्रह्म परमेश्वर हमें आशीर्वाद दे कि हम उसके यश को बढ़ानेवाले बनें।

रात्रि को ८।। बजे ला० हरदयाल जी का भाषण हुआ।

रविवार, २४ चैत्र, १९९२ तदनुसार ५ एप्रिल, १९३६

इस दिन की कार्यवाही को आर्यसमाज बच्छोवाली (लाहौर) के साप्ताहिक सत्सङ्ग का रूप दिया गया। पहले पं० ब्रह्मदत्त जी "जिज्ञासु" ने उपदेश दिया और यज्ञ-पात्रों का प्रदर्शन किया तथा उनकी व्याख्या की। पश्चात् पं० यशःपाल जी सिद्धान्तालङ्कार का व्याख्यान हुआ। उन्होंने बतलाया कि आर्यों को दैनिक यज्ञ और संस्कार अवश्य करने चाहिए। रात्रि को ८।। बजे पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु का सार-गर्भित व्याख्यान हुआ। आपने उपस्थित जनता को आर्य जीवन धारण करने का आदेश दिया।

सोमवार, २५ चैत्र, १९९२ तदनुसार ६ एप्रिल, १९३६

प्रातः ५।। से ६।। तक प्रभु-कीर्त्तन हुआ और पश्चात् ६।। से ७।। तक ब्रह्मपारायण यज्ञ हुआ। ८।। बजे पं० ज्ञानचन्द्र जी ने उपदेश दिया। रात्रि ८।। बजे पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर का व्याख्यान हुआ। उन्होंने सप्त महाव्याहृतियों की व्याख्या की।

मंगलवार, २६ चैत्र, १९९२ तदनुसार ७ एप्रिल, १९३६

प्रातः यथा-पूर्व समय पर प्रभु-कीर्त्तन और ब्रह्मपारायण यज्ञ हुआ। ८।। बजे पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति का उपदेश हुआ। रात्रि ७।। से १० तक धर्म-चर्चा सम्मेलन हुआ। इसका विषय था—"वर्ण व्यवस्था ही सामाजिक सङ्गठन का सबसे उत्तम साधन है।" उसके सभापति प्रो० शिवदयालु जी एम० ए० थे।

बुद्धवार, २७ चैत्र, १९९२ तदनुसार ८ एप्रिल. १९३६

प्रातः यथा-पूर्व समय पर प्रभु-कीर्त्तन और ब्रह्मपारायण यज्ञ हुआ। ८।। बजे आचार्य देवशर्मा जी का मधुर उपदेश हुआ। रात्रि ८।। को संस्कृत में वाद-प्रतियोगिता सम्मेलन हुआ। इसमें गुरुकुल के ब्रह्मचारियों और स्थानिक कालेजों के विद्यार्थियों ने भाग लिया। इसके प्रधान महामहोपाध्याय पं० माधव भण्डारी थे। श्री रघुवरदयाल विद्यार्थी ओरिएँटल कालेज, लाहौर तथा श्री जगन्नाथ विद्यार्थी गुरुकुल काँगड़ी दोनों एक जैसे होते हुए प्रथम रहे। कन्या गुरुकुल देहरादून की कुमारी शान्तादेवी द्वितीय रही।

बृहस्पतिवार, २८ चैत्र, १९९२ तदनुसार ९ एप्रिल, १९३६

प्रातः यथा-पूर्व समय पर प्रभु-कीर्त्तन और ब्रह्मपारायण यज्ञ हुआ। ८॥ बजे श्री स्वामी व्रतानन्द जी का सार-गर्भित उपदेश हुआ। रात्रि को ७॥ से १२ तक मुन्शी राजबहादुर के सभापतित्व में एक बृहत् कवि-सम्मेलन हुआ।

मुख्य कार्य-क्रम

शुक्रवार, २९ चैत्र, १९९२ तदनुसार १० एप्रिल, १९३६

प्रातः ५॥ से ६॥ तक भक्त मंगतराम जी की मण्डली तथा गुरुकुल कुरुक्षेत्र की मण्डली ने प्रभु-कीर्त्तन किया। फिर ब्रह्मपारायण यज्ञ हुआ।

८॥ बजे "ओ३म्" के झण्डे के फहराने का समारोह हुआ। महात्मा नारायण स्वामी, प्रधान आर्य सार्वदेशिक सभा ने पताका रोहण कार्य का सम्पादन किया। इस समारोह का दृश्य अपूर्व था। दश सहस्र के लगभग नर-नारियाँ इस अवसर पर उपस्थित थीं। पचास फुट ऊँचा पताका-वंश अर्द्ध-शताब्दी पण्डाल के सामने एक वेदिका पर गाड़ा गया। श्रीमती सीता देवी, श्रीमती ज्ञानदेवी तथा कुमारी यशोदा की अध्यक्षता में आर्य वीरांगनाएँ पर्याप्त संख्या में उपस्थित थीं। गुरुकुलों, स्कूलों और अन्य संस्थाओं से आए हुए पाँच सौ से अधिक आर्य-वीर उपस्थित थे जोकि पताका के इर्द-गिर्द खड़े थे। गुरुकुल काँगड़ी, आर्य हाई स्कूल लुधियाना, गुरुकुल हाई स्कूल गुजरांवाला तथा आर्य हाई स्कूल मिण्टगुमरी के बैंड आए हुए थे और उन्होंने पताका-उत्तूलन के पूर्व बारी-बारी बैंड बजाया। जब श्री नारायण स्वामी जी ने पुष्पों से अलंकृत पताका फहरायी उस समय बाजे बजने लगे और चारों ओर से वगण और देवियाँ पुष्प-वर्षा करती रहीं। आर्य वीरांगनाओं ने झण्डे का गीत गाया।

इस पताका-फहराने के अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान, मन्त्री तथा अन्य अधिकारी और अन्तरंग सभा तथा विद्या सभा के सभी सदस्यों के अतिरिक्त स्वा० स्वतन्त्रानन्द, स्वा० वेदानन्द, ला० रामकृष्ण भूत-पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब आदि आदि महानुभाव उपस्थित थे।

इस अवसर पर श्री नारायण स्वामी जी ने एक उपदेश दिया जिसका सार दिया जाता है। ऋषि दयानन्द ने वेद के सनातन अटल सिद्धान्तों पर आर्यसमाज की स्थापना की। ईश्वर की एकता और मनुष्यों के भ्रातृ-भाव की शिक्षा वेद देता है। आर्यसमाज का मुख्योद्देश्य इस सन्देश को फैलाना है। सब नर-नारी उस महान् प्रभु के पुत्र और पुत्रियाँ हैं, उन्हें एक-दूसरे के साथ भाई-बहिन का व्यवहार करना चाहिए। यह वैदिक धर्म का सन्देश है। झण्डे के नीचे खड़े होकर उन्हें इस सन्देश को फैलाने का व्रत धारण करना चाहिए।

सभा की सुवर्ण जयन्ती का उद्घाटन करते हुए स्वामी जी ने सभा की वर्त्तमान स्थिति का वर्णन किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब प्रारम्भ में एक छोटी-सी संस्था थी परन्तु इसका बड़ा विस्तृत क्षेत्र हो गया है। सभा कई गुरुकुल, कन्या गुरुकुल, स्कूल और कालेज चला रही है। इसने गत पचास वर्षों में बड़ा लाभकारी और उत्कृष्ट कार्य किया है। स्वामीजी ने जनता से कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह उन पर सुखों की वर्षा करे। पुनः उन्होंने लोगों को कहा कि वे सभा की सहायता करें। तदनन्तर ८॥ से ११॥ तक पं० श्री पाद दामोदर सातवलेकर की अध्यक्षता में वेद-सम्मेलन हुआ।

मध्याह्नोत्तर १॥ से २ तक म० सन्तराम और म० देशराज के भजन हुए। इसके पश्चात् २ से ३ तक पं० सत्यव्रत मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल काँगड़ी का आश्रम-व्यवस्था पर बड़ा प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। आपने बतलाया कि संसार में भोग-वाद और त्याग-वाद दो मार्ग हैं। महात्मा बुद्ध के उपदेश से राजकुमारों तक ने भिक्षुओं का वेश धारण कर लिया। भोग मार्ग का स्वरूप आजकल लोग देख रहे हैं। आजकल के विद्यार्थी शिक्षा-काल में ही भोग में प्रवृत्त हो जाते हैं। प्राचीन समय में ब्रह्मचारी त्याग का जीवन व्यतीत करते थे। उसके पश्चात् गार्हस्थ्य में भोग का आनन्द लेते थे। आजकल वृद्धावस्था में पहुँचे हुए गृहस्थ लोग भी भोगों में ही लिप्त रहते हैं। उन्हें वानप्रस्थ-आश्रम की मर्यादा को सामने रखते हुए त्याग के मार्ग पर चलना चाहिए। प्राचीन समय में नगर के बाहर वानप्रस्थियों के गढ़ होते थे। परन्तु आजकल उनके स्थान पर नाटक-गृह दृष्टिगोचर होते हैं।

३ से ५॥ तक आर्य सम्मेलन की प्रथम बैठक हुई। यह सम्मेलन श्री घनश्यामसिंह ऐम. ऐल. ए. की अध्यक्षता में हुआ। इसमें पहले पं० ठाकुरदत्त शर्म्मा (अमृतधारा) स्वागताध्यक्ष ने अपना भाषण पढ़ा। पश्चात् श्री प्रधान जी ने अपना भाषण पढ़ा और तदनन्तर प्रस्ताव पास हुए।

रात्रि ७ से श्री महात्मा हंसराज की अध्यक्षता में शिक्षा सम्मेलन हुआ। उसमें भारत के प्रसिद्ध दार्शनिक शास्त्रविद् डा० भगवानदास और डा० गोकुलचन्द नारंग की वक्तृताएँ हुईं और कई एक प्रस्ताव पास हुए।

शनिवार, ३० चैत्र, १९९२ तदनुसार ११ एप्रिल, १९३६

प्रातः ५॥ भक्त मंगतराम की संगीत पार्टी और पं० बुद्धदेव की कीर्तन पार्टी के प्रभु-भक्ति के रसीले भजन हुए। पश्चात् ब्रह्मपारायण यज्ञ की पूर्णाहुति हो कर यज्ञ-शेष बाँटा गया। ७॥ से ७॥। तक म० बिहारीलाल के भजन हुए। ७॥। से श्री स्वामी वेदानन्द

तीर्थ का उपदेश प्रारम्भ हुआ। उपदेश में उन्होंने बतलाया कि हमारी कर्म इन्द्रियाँ हमारे आत्मा को अवनत भी कर सकती हैं और उन्नत भी कर सकती हैं। हमारा शरीर एक यज्ञ है जिसकी यह अध्वर्यु हैं। यदि इनको बाहिर से हटाकर अन्तर्मुख किया जावे तो यह इस यज्ञ को सफल बना सकती हैं और मनुष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

८॥। से ११ तक श्री महात्मा विनोबा की अध्यक्षता में ब्रह्मचर्य-सम्मेलन हुआ। इसमें डा० भगवान्दास, आचार्य देवशर्म्मा, पं० प्रियव्रत आदि महानुभावों ने वक्तृताएँ दीं।

जलूस

अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव के कार्यक्रम का यह वह भाग है जिसका लायसैंस न मिलने के कारण दिसम्बर १९३५ में इस महोत्सव को स्थगित करना पड़ा था। सभा के अधिकारियों की इच्छा थी कि जलूस अत्यधिक शानदार होना चाहिए। इसी बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि जलूस को सफल बनाने के लिए सभा ने कितना प्रयत्न किया होगा।

निस्सन्देह यह जलूस पञ्जाब में एक अभूत-पूर्व समारोह था। इसने मथुरा-जन्म-शताब्दी तथा अजमेर निर्वाण अर्द्ध-शताब्दी के जलूसों की स्मृति को पुनर्जीवित कर दिया था। अजमेर के समामोह से यह किसी दृष्टि से भी कम न था। पञ्जाबी आर्य जहाँ जाते हैं वहाँ ही अपने प्रान्त का नाम उज्ज्वल कर आते हैं। अब तो उनका अपना और अपने प्रान्त में ही समारोह था। इसमें उन्होंने अपनी शक्ति तथा उत्साह का भरसक प्रदर्शन किया। सबसे बड़ा उत्साह-वर्द्धक दृश्य जो इसमें देखा गया है वह था जलूस में आर्य देवियों का आशा से कहीं बढ़कर १० सहस्रों की संख्या में सम्मिलित होना। आन्तरिक और बाह्य उत्साह के साथ-साथ एक विशेष यूनीफार्म का धारण करना भी किसी उत्सव तथा समारोह को अधिक चमत्कृत कर देता है। आर्य देवियों की केसरी साड़ियाँ वा केसरी दुपट्टे तथा आर्य पुरुषों की केसरी पगड़ियाँ इस समारोह की शोभा को द्विगुणित कर रही थीं। यह पौन लाख आर्य वीरों और आर्य वीरांगनाओं का एक मील से अधिक लम्बा समारोह राजपूताने की हो चुकीं भारत-विख्यात सेनाओं का एक दृश्य आँखों के सामने उपस्थित करता था। वीर-रस के दृश्य को निर्जीव लेखनी कहाँ तक चित्रित कर सकती है।

सबसे आगे "ओ३म्" की पताका कई आर्य वीरों ने उठाई हुई थी। पीछे सक्खर का श्रद्धानंद बैंड बज रहा था। बैंड के पीछे अश्वारोही आर्य वीरों की पार्टी थी। इसके पीछे आर्यसमाज के बड़े-बड़े नेता, संन्यासी, आर्य प्रतिनिधि सभा के सदस्य, गौन पहने हुए गुरुकुल के स्नातक, गुरुकुल काँगड़ी, गुजराँवाला, जेहलम तथा कुरुक्षेत्र के ब्रह्मचारी अपने-अपने बैंडों के साथ चल रहे थे।

महिला-समारोह की अध्यक्षता श्रीमती सीतादेवी जी कर रही थीं। इसमें कन्या

गुरुकुल देहरादून तथा कन्या महाविद्यालय जलन्धर की छात्राएँ भी सम्मिलित थीं। आठ बैंड सम्पूर्ण मार्ग-भर में बजते रहे।

इसके पीछे रावलपिण्डी का आर्य वीर दल, फ़ीरोज़पुर, इच्छरा, सियालकोट, कोटली लोहाराँ, शाहदरा, क़िला गुज्जरसिंह (लाहौर), अलीपुर, अमृतसर, जड़ाँवाला, डिंगा, मण्डी बहावुद्दीन, चूनियाँ, तलवण्डी, अम्बाला छावनी, दीनानगर और मिण्टगुमरी के आर्यसमाजों की मण्डलियाँ थीं। इनके पीछे डी०ए०वी० स्कूल मिण्टगुमरी का बैंड, दयानन्द-उपदेशक-विद्यालय की मण्डली, फ़ीरोज़पुर स्कूल बैंड, अमृतसर की गतका पार्टी, स्काउट पार्टी, तथा आर्य वीर-दल, आर्य द्वावा हाई स्कूल जलन्धर, कन्या महाविद्यालय जलन्धर, और गुरुदासपुर, राजनपुर, सरगोधा, जलन्धर, चीचावत्नी, सक्खर, जामपुर, देहली और वच्छोवाली (लाहौर) के आर्यसमाजों की मण्डलियाँ तथा पञ्जाब केन्द्रीय अनाथालय और आर्यसमाज कादियाँ की मण्डलियाँ थीं।

जुलूस अपने नियत समय पर एक बजे मध्याह्न को गुरुदत्त भवन से चला और चैटर्जी रोड से होता हुआ अनारकली पहुँचा। इसने लोहारी दरवाज़े से नगर में प्रवेश किया और यह चौक मती, शाहालमी बाज़ार, मच्छी हट्टा, रंग महल, वाटर वर्क्स, गुमटी बाज़ार और सूत्रमंडी से होता हुआ लोहारी दरवाज़े से निकल कर गुरुदत्त भवन सायं ८ से पहले पहुँच गया।

महात्मा हंसराज अनारकली में भल्ला शू कम्पनी की दुकान पर विराजमान थे। उन्होंने तथा ला० मेहरचन्द महाजन, प्रधान, डी० ए० वी० कालेज मैनेजिंग कमेटी ने जलूस के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को पुष्प मालाएँ पहनाईं। इस दुकान पर तो जलूस पर पुष्प वर्षा की गई। अनारकली बाज़ार तो जलूस के जन-समारोह से समाकीर्ण था। शाहालमी बाज़ार और मच्छीहट्टा में लोगों ने मधुर और शीतल जल के अनेक प्याऊओं का प्रबन्ध किया था। केसरी पगड़ियों, दुपट्टों और साढ़ियों ने जलूस को वसन्त ऋतु में एक विस्तीर्ण तथा सुदीर्घ प्रफुल्ल उद्यान का रूप दे दिया था। जलूस की लम्बाई का ज्ञान इससे लगाया जा सकता है कि जिस समय जलूस के अगले भाग ने नगर में प्रवेश किया और चौक मती पहुँचा तो इसकी अन्तिम मण्डली अभी यूनिवर्सिटी दफ़्तर के सामने ही पहुँची थी। और पुनः जब इसका प्रथम भाग गुरुदत्त भवन में पहुँचा तो इसका अन्तिम भाग अभी सूत्र मण्डी में ही था। जलूस को अनारकली में गुज़रने के लिए पूरे दो घण्टे लगे और इस अन्तर में सरक्यूलर रोड और अनारकली में लोगों का यात-आयात (ट्रैफ़िक) बन्द कर दिया गया था।

जलूस का प्रबन्ध पं० ठाकुरदत्त शर्म्मा की देखरेख में होता रहा। आर्य वीरों ने जलूस के कार्य को सुचारु रूप से किया। संपूर्ण मार्ग में जलूस बड़ी शान्ति से चलता रहा। कहीं किसी प्रकर की रुकावट या अड़चन नहीं पड़ी। महिलाओं को भी किसी प्रकार का

कष्ट नहीं पहुँचा। आर्य वीरों के सुचारु प्रबन्ध में किसी की शक्ति नहीं कि इसमें विघ्न-बाधा डाल सके। वैसे सरकार ने अपनी ओर से पोलीस का प्रबन्ध भी साथ कर दिया था। सिटी मैजिस्ट्रेट प्रबन्ध की देखभाल कर रहे थे। नियत समय पर बिगुल बजा, अश्वारोही आर्य वीरों ने जलूस में घूम कर संध्या के समय की घोषणा की। प्रत्येक मण्डली अपने-अपने स्थान पर खड़ी हो गई और सहस्रों नर, नारियों ने सम्मिलित मन्त्र-गान आरम्भ किया। यह दृश्य भी आर्यसमाज के इतिहास में अपूर्व था।

११ एप्रिल को रात्रि के ८ बजे भजनों के साथ कार्यवाही प्रारम्भ हुई। पश्चात् पं० लोकनाथ तर्कवाचस्पति का अछूतोद्धार पर अतीव प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। उन्होंने बतलाया कि निस्सन्देह हिन्दुओं ने जो अछूतों पर अत्याचार किए हैं वे बड़े ही शोकप्रद हैं, परन्तु जिस परिणाम पर डा० अम्बेदकर पहुँचे हैं वह भी ठीक नहीं है। उन्होंने अछूतोद्धार के विरोधी पौराणिकों की मनोवृत्ति पर भी सम्यक् प्रकाश डाला।

श्री पण्डित जी के व्याख्यान के अनन्तर सिन्ध प्रान्त के प्रसिद्ध आर्य प्रचारक प्रो० हासानन्द ने अपने जादू के करतब दिखलाए। उनके अत्यन्त मनोरञ्जक, रहस्य-पूर्ण और हास्यप्रद करतब देख कर जनता को खूब विनोद-सामग्री प्राप्त हुई। वे करतबों के साथ-साथ वैदिक धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार भी करते जाते थे। यह शिक्षा-मिश्रित मनो-विनोद मध्य रात्रि १२ बजे समाप्त हुआ।

रविवार, १ वैशाख, १९९२ तदनुसार १२ एप्रिल, १९३६

प्रातः ५॥ से ६॥ तक भक्त मंगतराम की मंडली तथा म० जगदीशचन्द्र की मंडली ने प्रभु-कीर्तन किया। ६॥ से ७ तक हवन-यज्ञ हुआ। ७ से १० तक श्री बाबू घनश्यामसिंह ऐम० ऐल० ए० की अध्यक्षता में आर्य सम्मेलन की दूसरी बैठक हुई और प्रस्ताव पास हुए। १० बजे से श्री रामकृष्ण भूतपूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब के प्रधानत्व में आर्य वृद्ध-सम्मेलन हुआ। मध्याह्न १ से १॥ तक भजन हुए और पश्चात् १॥ से ३ तक हिन्दी-जगत् के विख्यात् उपन्यास-लेखक स्वर्गीय श्री मुंशी प्रेमचन्द जी की प्रधानता में आर्य-भाषा सम्मेलन हुआ।

एक भजन होने के पश्चात् ३॥ बजे आचार्य रामदेव प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा का व्याख्यान तथा अपील हुई। उन्होंने कहा कि कई लोग यह समझते हैं कि आर्य समाज उन्नति की ओर नहीं अपितु अवनति की ओर जा रहा है। परन्तु वस्तुस्थिति ऐसी है कि आर्यसमाज उन्नति के पथ पर जा रहा है। वैदिक धर्म सबसे प्राचीन धर्म है। एक यूरोपियन फ़िलास्फ़र ने कहा है कि वैदिक धर्म सब धर्मों की जननी है। वैदिक धर्म का डंका समस्त यूरोप और अमेरिका में बज रहा है। ऋषि के विचार समूचे भूमण्डल पर फैल रहे

हैं। भारत के प्रथम गवर्नर-जनरल वारन हेस्टिंग्ज़ ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बोर्ड आफ़ डायरैक्टर्ज़ को पत्र लिखा था कि वेद संसार की सबसे पुरानी पुस्तक है। जब जगत् नष्ट हो जायगा तो वेद फिर भी जीवित रहेगा। संसार की जो जाति भी उन्नति कर रही है वह वेद को किसी-न-किसी रूप में मानती है। आप लोगों को वेद पर पूर्ण विश्वास होना चाहिए।

व्याख्यान देते हुए प्रधान जी ने कहा कि वैदिक धर्म का प्रचार केवल भारत में ही नहीं अपितु समस्त भूमण्डल में हो रहा हैं। जर्मनी के एक लेखक ने यूरोपियन जातियों से अपील की है कि इन्हें बाइबल को बन्द करके वैदिक धर्म का सम्यक् अध्ययन करने के लिए वेदों का स्वाध्याय करना चाहिए। हमारे वेद हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयों में फैल रहे हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब ने वैदिक धर्म को फैलाने के लिए जो कार्य किया है वह प्रत्येक व्यक्ति को विदित है।

ऋषि दयानन्द ने पहले हिन्दी का प्रचार प्रारम्भ किया था। अब कांग्रेस भी हिन्दी के पक्ष में हो रही है। आर्यसमाज का आदर्श ऊँचा है और सर्वदा ऊँचा रहेगा। आर्य-समाज उन्नति कर रहा है। जहाँ आर्यसमाज के सदस्य कुछ सहस्रों की संख्या तक सीमिति थे अब उनकी संख्या लाखों तक पहुँच गई है। मुझे शोक है कि हम में भक्ति नहीं है। हमारे हृदय में वेद भगवान् विराजमान होना चाहिए और हमें ऋषि दयानन्द के प्रदर्शित मार्ग पर चलना चाहिए। यदि आप शान्ति चाहते हैं तो आपको प्रति दिन प्रभु का नाम स्मरण करना चाहिए।

आर्य भाइयों को ग्रामों में जाकर वेदों का उपदेश करना चाहिए और प्रतिदिन घर में वेदों का स्वाध्याय करना चाहिए। आप लोगों को वेद का उपदेश करने और ग्रामों में वेदों का प्रचार करने के लिये बहुत दिल खोल कर धन देना चाहिए। इस कार्य के लिए २॥ लाख रुपये की आवश्यकता है।

आर्य भाइयो ! आपको संगठित होना चाहिए और शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। मुसलमानों और सिक्खों में शक्ति है। यदि आप में शक्ति होती तो सरकार आपके अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव को स्थगित करने का हौसला न कर सकती। कोट-पतलून पहननेवाले मिस्टर गांधी ने कुछ काम नहीं किया। परन्तु लंगोट-बन्द महात्मा गांधी की शक्ति को देखिए ! उन्होंने राजकीय प्रासादों को कम्पायमान कर दिया और यूरोप की जातियों में अपनी शक्ति की दुंदभि बजा दी। आपको वेदों का प्रचार करना चाहिए और उनका डंका संसार में आपको बजाना होगा। नवयुवकों को उपदेशक बनना चाहिए। वानप्रस्थियों को वेद-प्रचार का कार्य अपने हाथ में लेना चाहिए। अन्त में प्रधान जी ने कहा कि वेद-प्रचार

के लिए बहुत रुपये की आवश्यकता है। इसके लिए आप दिल खोलकर आर्यसमाज को दान दें। इसके पश्चात् धन संग्रह किया गया।

रात्रि ७ बजे कार्यवाही प्रारम्भ हुई। पहिले आर्य हाई स्कूल लुधियाना का आरचेस्टरा हुआ। पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी तथा गुरुकुल कुरुक्षेत्र के ब्रह्मचारियों ने जमनास्टक, लेजिअम, मरहट्टी, लाठी और तलवार के प्रशंसनीय करतब दिखाए। इन खेलों में प्रवेश यद्यपि टिकट से था तथापि शीघ्र ही पण्डाल इतना जनाकीर्ण हो गया कि खेलों को बन्द करना पड़ा।

सोमवार, २ वैशाख, १९९३ तदनुसार १३ एप्रिल, १९३६

प्रातः ५॥ से ६॥ तक भक्त मंगतराम की मण्डली तथा कन्या महाविद्यालय जलन्धर की कीर्तन मण्डली ने प्रभु-कीर्तन किया। ६॥ से ७॥ तक हवन-यज्ञ हुआ। फिर म० जगदीशचन्द्र के भजन के पश्चात् पं० मुक्तिराम उपाध्याय का यजुर्वेद के छः मन्त्रों के आधार पर उपदेश हुआ। उन्होंने बतलाया कि मन को शिव संकल्प बनाने से ही आत्मा का कल्याण हो सकता है।

८॥ बजे श्रीमती विद्यावती सेठ, बी० ए० आचार्या कन्या गुरुकुल देहरादून की प्रधानता में महिला सम्मेलन हुआ और इसमें कई एक प्रस्ताव पास हुए। २ बजे मध्याह्नोत्तर म० जगदीशचन्द्र के भजनों के साथ कार्यवाही प्रारम्भ हुई। २-१५ से २-२५ तक स्वामी वेदानन्द ने एक सम्मिलित प्रार्थना पढ़ी और जनता से अपील की वह यहाँ आकर कोई बुराई छोड़ जायँ। २-२५ से २-३० तक समूची जनता ने मौन धारण करके आत्म-चिन्तन किया। इसके पश्चात् प्रधान जी के अनुपस्थित होने पर श्री प्रो० महेन्द्रप्रताप के प्रधानत्व में आर्य सम्मेलन की तृतीय बैठक हुई और प्रस्ताव पास हुए। आर्य सम्मेलन के पश्चात् व्यवसाय सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। श्री सेठ शूरजी वल्लभदास सम्मेलन-प्रधान की अनुपस्थिति में पं० जगन्नाथ निरुक्त-रत्न (अमृतसर) ने प्रधान का आसन ग्रहण किया। इस सम्मेलन में कई प्रस्ताव पास हुए।

रात्रि ७ बजे भजनों से कार्यवाही प्रारम्भ हुई। ७॥ बजे पं० बुद्धदेव विद्यालंकार का भाषण प्रारम्भ हुआ। उन्होंने बतलाया कि अन्य जातियाँ भारत पर पत्थर फैंकती हैं और भारत उन्हें फल देता है। वह फल वैदिक धर्म और वैदिक सभ्यता का है। पहले आर्यसमाज संख्या बढ़ाता रहा है। अब यह गुणों का अन्वेषण भी करने लगा है। यदि आप दूसरों को अपने घर में बुलाना चाहते हैं तो केवल गृह का द्वार खोल देना ही पर्याप्त न होगा। यदि किसी के घर में कूड़ा-कर्कट भरा हो तो केवल द्वार खोलने ही से लोग घर में नहीं आ जायँगे। चार वर्ण और चार आश्रम वैदिक धर्म का सार हैं। ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थ आश्रम आता है। गृहस्थ आश्रम के लिए नगर की आवश्यकता है। आर्यसमाज ने अभी तक कोई नगर ही नहीं बनाया।

वक्ता महोदय ने कहा कि हमारी सभ्यता बड़ी उच्च थी। रामायण का दृष्टान्त देते हुए पण्डित जी ने बतलाया कि लक्ष्मण सीता के पाओं के आभूषण ही पहचान सका क्योंकि शरीर के अन्य अंगों के आभूषण उसने कभी देखे ही नहीं थे। इस सभ्यता पर हमें गर्व है। मेरी इच्छा है कि आर्यों की एक नगरी होनी चाहिए। और हम सन्ध्या और हवन के नियमों पर दृढ़ रहें। आजकल के बाबू बिस्तर से निकलते ही हैं तो पहले उनका टी टाइम (चाय पीने का समय) और पश्चात् टट्टी टाइम (शौच का समय) और फिर रात्रि को टाकी टाइम (नाटक देखने का समय) होता है। इन लोगों ने सभ्यता और ईश्वर के नाम को बदनाम कर दिया है। अन्त में पण्डित जी ने इच्छा प्रकट की कि वेदों का भाष्य देश-देश और घर-घर में पहुँचाया जाय।

८॥ से ९ तक खेलने में जीतने वाली टीमों को पारितोषिक वितरण किया गया। श्री पं० ठाकुरदत्त शर्म्मा (अमृतधारा) के कर-कमलों द्वारा यह पारितोषिक वितरण हुआ। हाकी टीमों में फ़ाइनल मैच में राइफ़ल क्लब की टीम प्रथम रही और गुरुकुल कांगड़ी की टीम द्वितीय रही। गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ स्कूलों में हाकी में प्रथम रहा और गुरुकुल हाई स्कूल गुजरांवाला द्वितीय रहा। फ़ुटबाल में डी० ए० वी० हाई स्कूल अमृतसर प्रथम रहा। आर्य हाई स्कूल लुधियाना का बैंड प्रथम रहा। इसके अतिरिक्त संस्कृत वाद-प्रतियोगिता में एक देवी को भी पारितोषिक दिया गया। पारितोषिक ट्राफ़ियों तथा कपों (विजय-पात्रों) के रूप में दिये गए।

९ से १० तक आचार्य रामदेव, प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने अन्तिम वक्तृता दी। उन्होंने बतलाया कि यह एक ऐसी अर्द्ध-शताब्दी है जो भारतवर्ष में पहली बार इस प्रकार सफल हुई है। संगठन की स्मृति में इस क़दर शानदार जयन्ती कभी नहीं मनाई गई। अमरीका के बिना और किसी देश में ऐसी प्रणाली नहीं है। मैं आपका धन्यवाद करता हूँ कि आप इतनी संख्या में महर्षि दयानन्द के बताए हुए संगठन की शान बढ़ाने के लिए एकत्र हुए हैं। संगठन की स्मृति के मनाने में आर्यसमाज के दोनों विभाग सम्मिलित हैं। महात्मा हंसराज सभा के प्रधान थे। राय बहादुर बद्रीदास भी सभा के प्रधान रह चुके हैं। मैंने इन सब प्रधानों के चरणों में बैठकर सेवा करने का ढंग सीखा है। मैं इन्हें प्रणाम करता हूँ। आपका सेवक प्रत्येक विपत्ति के मुक़ाबले पर खड़ा रहा। जहाज़ को आग भी लगी परन्तु सेवक अपने स्थान से नहीं हिला। भगवान् का धन्यवाद है, आप भाइयों और बहिनों का विश्वास है जिसके आश्रय पर मैंने सेवा की। मैं आपका सेवक हूँ और आपका धन्यवाद करता हूँ।

सम्मेलन

१. धर्मचर्चा सम्मेलन

मंगलवार ७ एप्रिल १६३६ को रात्रि ७॥ से १० तक धर्मचर्चा सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन का विषय "वर्ण-व्यवस्था ही सामाजिक संगठन का सबसे उत्तम साधन है" था। इसके प्रधान प्रो० शिवदयालु एम० ए० थे।

पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने कहा कि वैदिक धर्म के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को संसार में अपना मिशन चुनना चाहिए। 'वर्ण' का तात्पर्य यह है कि अपने जीवन के उद्देश्य का निर्णय करना। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य स्वयं उत्पन्न हुई चीजें नहीं हैं। जो मनुष्य पढ़ता है, पढ़ाता है वह ब्राह्मण कहला सकता है। जो मनुष्य परिस्थितियों के अनुसार अपने आपको बेच देता है वह ब्राह्मण नहीं है। जो अपने आपको विद्वत्ता में लीन कर देता है वह ब्राह्मण है। इसी प्रकार क्षत्रिय वह है जो निर्धनों और ब्राह्मणों की रक्षा के लिए बल प्राप्त करता है। 'वर्ण' का अर्थ है देश की भलाई को सामने रख कर कोई मिशन चुनना। 'वर्ण' का अर्थ चुनाओ है और व्यवस्था का अर्थ छोटे-बड़े का ठीक भेद है। हमारे यहाँ तो उसे बुरा समझा जाता है जिसके पास धन हो। आर्य मर्यादा उस पंडित को उत्तम मानती है जिसमें ज्ञान और आत्म-संयम हो।

प्रो० यू० एन० बाल प्रतिनिधि ब्रह्मसमाज ने कहा कि वर्ण-व्यवस्था सर्वदा ही भारत को नीचे की ओर ले गई है। वर्ण और जाति सब झूठ हैं। धर्म एक है। कर्म सबका अपना-अपना है। महात्मा गान्धी प्रत्येक कार्य कर लेते हैं। वह ब्राह्मण का कार्य करते हैं। उन्होंने एक अवसर पर मैला भी साफ़ किया।

प्रो० तेजासिंह खालसा कालेज अमृतसर ने बतलाया कि 'वर्ण' का तात्पर्य हम साधारणतया "रंग" समझते थे। संसार ने गोरी नसल की तक़सीम रवा रखी है। पहले वक्ता

ने वर्ण-व्यवस्था के विचित्र अर्थ बतलाए हैं कि जन्म से ब्राह्मण या क्षत्रिय नहीं होना चाहिए। भारत की बुरी अवस्था इसी विभाग से हुई है।

पं० सन्तराम बी० ए० (ज़ात-पात तोड़क मण्डल) ने बतलाया कि 'वर्ण' का अर्थ अधूरा बतलाया गया है। आजकल एक एम० ए० अपने मिशन के सम्बन्ध में कोई निर्णय नहीं कर सकता। छः वर्ष का बच्चा तो फिर क्या कर सकेगा। वर्ण-व्यवस्था में शूद्र भी एक वर्ण है। शूद्र का नाम बहुत बुरा है। यदि शूद्रों का राज्य हो और इन्हें शूद्र नाम से पुकारा जाय तो वे ऐसा पुकारनेवालों के मुँह पर चपत लगाएँ। वस्तुतः वर्ण-व्यवस्था शूद्रों के लिए 'कम्यूनल एवार्ड' है और सात करोड़ मनुष्यों को दासता में रखने का ढोंग है।

प्रो० गुलशनराय ने कहा कि मैं जानता हूँ कि 'वर्ण-व्यवस्था' गुण, कर्म और स्वभाव पर निर्धारित है। परन्तु देखना यह है कि गुण, कर्म और स्वभाव किन-किन बातों पर आश्रित हैं। मनुष्य का कर्म इस की नसल और जातीयता पर निर्भर है। जिस समय किसी घोड़े को घुड़दौड़ में सम्मिलित करना हो तो इसकी नसल को देखते हैं। मनुष्य के विचारों और शरीर पर मौरूसी प्रभाव बहुत होता है और हम इसको विगतदृष्टि नहीं कर सकते। अमरीका और जर्मनी में मनुष्यों को चार प्रकार का क़रार दिया गया है। और यहाँ तक क़रार दिया गया है कि यदि दो भिन्न नसलों का रक्त मिल जाय तो सन्तान अच्छी नहीं हो सकती। इसी लिए जर्मनीवालों ने विधान कर दिया है कि कोई जर्मन किसी जर्मन-भिन्न से विवाह न करे। यदि ऐसा कोई करेगा तो उसका विवाह अवैध समझा जायगा। इसी कारण जर्मनी से यहूदियों को निकाल दिया गया है। इसके अतिरिक्त आप देखते हैं कि जाटों, गूजरों और राजपूतों में शिक्षा बहुत कम है। शेखों, बनियों और पण्डितों में विद्या का अधिक प्रचार है। यह वैज्ञानिक नियम है, आप इसको विगतदृष्टि नहीं कर सकते कि गुण, कर्म और स्वभाव पर मौरूसी प्रभाव आवश्यक है।

२. कविता सम्मेलन

बृहस्पतिवार, ६ एप्रिल रात्रि ७॥ से १० तक मुन्शी तिलोकचन्द 'महरूम' के सभापतित्व में कवि सम्मेलन हुआ। इसमें निम्न विषय कविता के लिए निर्वाचित किए गए थे—

(१) आर्यसमाज, (२) ऋषि दयानन्द, (३) अछूतोद्धार, (४) वेद, (५) गुरुकुल शिक्षा, (६) आर्य सभ्यता, (७) ज़ात-पात की ख़राबियाँ, (८) आर्यसमाज के शहीद—पं० लेखराम, स्वा० श्रद्धानन्द आदि महानुभाव, (९) स्त्री-शिक्षा, (१०) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की सुवर्ण जयन्ती।

पंजाब और देहली के लब्ध-प्रतिष्ठ कवि इस सम्मेलन में सम्मिलित हुए। मुन्शी राज-

बहादुर जी 'शरर' देहली, प्रो० चन्द्रभान जी "कैफ़ी" देहली, ला० अनूपचन्द जी 'आफ़ताब' पानीपत, ला० शगुनचन्द जी "रोशन" बी० ए०, एल०-एल० बी०, पानीपत, श्री 'कमर' जलालाबादी, श्री म० मनोहरलाल जी 'शहीद' बी० ए०, म० जैमिनी जी 'सरशार' खैरपुर सादात, श्री पं० वितस्ताप्रसाद जी 'फ़िदा', प्रो० सन्तसिंह मोगा, कवि धनपत जी आदि कवीन्द्रों ने अपनी-अपनी मनोहर कविताएँ सुनाईं।

३. वेद सम्मेलन

शुक्रवार, १० एप्रिल प्रातः ८॥ से ११॥ तक पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी के सभापतित्व में वेद सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। सभापति ने अपना अभिभाषण पढ़ा। इसका सार नीचे दिया जाता है—

सभ्य स्त्री पुरुषो !

इस समय सम्पूर्ण संसार में तथा अपनी भारत भूमि में भी आसुरी भोग-युग शुरू हुआ है, भोग-वृद्धि की आसुरी बातें करना इस समय का युग-धर्म हो चुका है। तप के स्थान पर भोग का आक्रमण हो चुका है, परन्तु आप सब सभ्य सज्जन स्त्री-पुरुष इस भोग-युग की चमकीली कल्पनाओं को मन से हटाकर यहाँ दिव्य धर्म-भाव से उपस्थित होकर, सृष्टि के प्रारम्भ काल की महनीय वैदिक सभ्यता का श्रवण मनन, निदिध्यासन करना चाहते हैं। आपका यह संकल्प कितना शुभ है। इसीसे मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा है कि कलियुग का अस्त होकर इस समय सत्य युग का ही उषःकाल होने लगा है।

हम जब अपने प्राचीन आर्य शास्त्रों की ओर देखते हैं, तो उनमें से हर एक शास्त्र में वेदों के विषय में अत्यन्त परिशुद्ध आदरभाव सुस्पष्ट रीति से दीखता है। वैद्यक, ज्योतिष, वास्तु, स्थापत्य, सूप, रसायन, काम, अर्थ, राज्यशासन आदि सभी शास्त्रों में देखने से ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि इनका वेद के विषय में बड़ा ही समादर का भाव है, इतना ही नहीं, परन्तु ये शास्त्र वेद को अन्तिम प्रमाण भी मानते हैं। फिर धर्म, यज्ञ, कर्म, योग, अध्यात्म आदि शास्त्रों ने वेद का प्रामाण्य स्वीकृत किया तो उसमें आश्चर्य ही क्या है? क्योंकि ये शास्त्र तो वेद के आधार से ही फैले हुये हैं। इसका तात्पर्य यह है कि हमें एक भी आर्य शास्त्र ऐसा नहीं दीखता कि जो वेद को छोड़ कर अपना जीवन धारण करने में समर्थ हो। जब हम इन ऋषियों में से वैद्यक जैसे प्रत्यक्षानुभव के शास्त्रों के निर्माता ऋषियों को भी अपने ग्रन्थ निर्माण करने में वेद को मुख्य और आदिम प्रमाण मानते हुए देखते हैं और सभी शास्त्रकार इसी तरह वेद को शिरोधार्य समझते हैं, तो हमें वेद को आदिम मूल प्रमाण मानने में घबराने का कोई कारण नहीं है।

एक ओर प्राचीन आर्य विद्वानों का अत्यन्त सुदृढ़ विश्वास वेदों पर है ऐसा हम देखते हैं और साथ-साथ जब हम देखते है कि इस समय के विद्वानों में से कई तो वेदों को सुमेरियन गीत मानते हैं, कई दूसरे असीरियन, खाल्डीयन मानते हैं, कई इजिप्शीयन भी मानते हैं और कई अन्य कुछ भी मानते होंगे, तो ऐसी स्थिति देख कर साधारण मनुष्यों की मति चक्कर में पड़ जाती है और वे कहने लगते हैं कि यह क्या हम किस को मानें और क्या करें।

भाइयो ! इस तरह के मतभेद देख कर घबराने का कोई कारण नहीं है। यदि हमारे पास धैर्य हो, हमारे पास तर्क शुद्ध विचार करने की पद्धति हो, तो इस विरोध से हम डरेंगे नहीं। परन्तु हमारे पास इस समय शास्त्र-शुद्ध पद्धति तैयार नहीं है, इसलिए नई कल्पना सुनते ही हम घबरा जाते हैं और कहने लगते हैं कि धर्म का प्रलय-काल आ गया है। मैं यहाँ कहता हूँ मत घबराओ, मत चिल्लाओ, शास्त्र-शुद्ध पद्धति को निर्माण करो और उसका अवलम्बन करो और आगे बढ़ो। यदि आप शास्त्रीय पद्धति का अवलम्बन करेंगे तो भविष्य काल आपका होगा, और उसका अवलम्ब न करते हुए यदि आप विकारवश होंगे तो आपकी स्थिति भविष्य में न रहेगी।

इस समय जगत् में अपने माने हुए मत का प्रचार करनेवाले ईसाई, इस्लामी, बौद्ध और जैन आदि हैं। ये सब लोग अपने माने हुए ग्रन्थों को आद्योपान्त पढ़ने और समझनेवाले हैं। उनके पास उनके पूर्ण रीति से अनुवादित धर्म-पुस्तक तैयार हैं। ईसाइयों ने तो अपने मत-ग्रन्थ के इतने अनुवाद, इतने साधन-ग्रन्थ और इतने फुटकर पुस्तक प्रकाशित किये हैं कि उनकी पद्धति निःसन्देह समादर करने और आदर्शरूप सम्मुख रखने योग्य मानी जानी चाहिए। सब लोग अपना मत-ग्रन्थ समझ कर प्रचार का कार्य करते हैं और हम ही ऐसे हैं कि विशेष प्रयत्न न करते हुए वेदानुवाद के लिये किसी ऋषि के आने की ही प्रतीक्षा कर बैठे हैं। आपको यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रकार मुक़ाबला अन्तिम विजय का सूचक नहीं हो सकता, अतः इस शिथिलता को छोड़ कर हम सबको वेद के प्रामाणिक अनुवाद का कार्य सबसे पहले करना चाहिये।

अब प्रश्न हो सकता है कि क्या (१) हम वेद का प्रामाणिक अनुवाद कर सकेंगे ? (२) ऋषि की सहायता के बिना हम यथार्थतया अनुवाद करने योग्य वेद को जान सकेंगे ? इन प्रश्नों के लिये मेरे उत्तर ये हैं। (१) हम वेद का प्रामाणिक अनुवाद कर सकते हैं। (२) ऋषियों की सहायता हमारे लिये पर्याप्त है, और जितनी सहायता ऋषियों ने की है, वह लेकर हम वेद का यथार्थ अनुवाद करने में समर्थ हो सकते है। यहाँ 'हम' का अर्थ 'मैं' अकेला अथवा कोई एक पंडित ऐसा नहीं है। 'हम' का अर्थ निष्पक्षपाती पंडित-मण्डली है। जो

कार्य एक पंडित नहीं कर सकता वह कार्य पंडितों की मण्डली कर सकती है। सबसे पहले वेद का केवल अनुवाद करना यह कोई कठिन कार्य नहीं है, मन्त्रों का गूढार्थ प्रकाशित करना निःसन्देह महा कठिन कार्य है, परन्तु वह पीछे से होता रहेगा। इस समय हमारे सामने शुद्धानुवाद का ही प्रश्न है और उसके लिये ही मेरा यह उत्तर है कि वह कार्य इस समय हम कर सकते हैं। मैंने यहाँ कहा कि "ऋषियों की सहायता हमारे लिये पर्याप्त है," इसका भी अर्थ समझना चाहिये, इस कथन से मेरा आशय यह है—

(१) स्वयं वेद मन्त्रों में वेद का अर्थ करने की कुञ्जियाँ हैं।

(२) अनेक ब्राह्मण-ग्रन्थों में वेद के अर्थ किए हैं और वेद के शब्दार्थ बताये हैं।

(३) शाखा-ग्रन्थों में मन्त्रों के पर्याप्त और अर्थ दिये हैं।

(४) वेदाङ्गों में पर्याप्त अर्थ विषयक सूचनाएँ हैं।

(५) इतिहास और पुराणों में भी बहुत अर्थ खोले हैं। कई वैदिक सूक्तों के अनुवाद ही हैं।

इतने वाङ्मय से करीब ३०० ऋषियों की सहायता हमें मिल सकती है और जितना मैंने विचार किया है उससे मुझे यह विश्वास हुआ है कि इतनी सहायता आज के हमारे कार्य के लिये प्रर्याप्त है।

प्रश्न यह है कि यह ३०० ऋषियों की सहायता हमें कैसे मिले? इसी के लिये साधन-ग्रन्थ निर्माण करने का यत्न हमें सबसे पहिले करना चाहिये। ये सब पुस्तक शुद्ध पाठ निश्चित करके मुद्रित करने चाहिये अन्यथा इनसे सहायता जैसी मिलनी चाहिये वैसी मिलनी असम्भव है। जो शाखा-ग्रन्थ मिलते नहीं उनकी खोज करनी चाहिये, जो ब्राह्मण मिलते नहीं उनको ढूँढना चाहिये।

जो किसी अन्य मत वालों के पास नहीं है वह योग साधन प्रत्यक्ष साक्षात्कार कर सकने का सामर्थ्य देनेवाला साधन हमारे पास है। वेदार्थ करने में इसकी बड़ी सहायता है। इस साधन की ओर हमारे वैयक्तिक तथा सामुदायिक प्रयत्न इस समय तक नहीं हुए हैं। वेद के तत्त्वज्ञान का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने का एकमेव साधन योग है, इसलिए योग शास्त्र को वेदांगों में गिना गया है। यह योग शास्त्र वेद का अङ्ग है और इस वेद के अङ्ग को न जानते हुए कोई भी वेद जान नहीं सकता। केवल तर्क की दौड़ हमने बहुत की है, उसका सौवाँ हिस्सा भी प्रयत्न इस मार्ग से जाकर साक्षात्कार करने के विषय में नहीं हुआ। आप पूछेंगे कि योग का वेद के अर्थ जानने में कैसे उपयोग हो सकता है? इस प्रश्न के उत्तर में मेरा निवेदन है कि—

ये पुरुषे ब्रह्म विदुस्ते विदुः परमेष्ठिनम् । अथर्व १० । ७ । १७ ॥

"जो (पुरुषे) मनुष्य में ब्रह्म को जानते हैं वे (परमेष्ठिनं) परमेश्वर को जानते हैं ।" अर्थात् ब्रह्मज्ञान सानुभव जानना है तो सबसे पहिले अपने अन्दर ब्रह्मानुभव होना चाहिए जो अपने अन्दर ब्रह्म का साक्षात्कार करेंगे वे ही विश्वव्यापक ब्रह्म को यथावत् जान सकते हैं । अपने अन्दर की आत्म-शक्ति का प्रत्यक्ष साक्षात्कार अष्टांग योग साधन के विना नहीं हो सकता । अतः अपने अन्दर आत्मा का अनुभव करके वेद के तत्व को यहाँ प्रत्यक्ष निरीक्षण करने की आवश्यकता है ।

मेरी तो ऐसी सम्मति हो रही है कि हमारी शिक्षा संस्थाओं के पाठ्य क्रम में भी इस योग साधन का थोड़ा-थोड़ा प्राथमिक भाग रखना चाहिये, और जो इसमें साधन करने में प्रवीण होंगे, उनको योग विद्या में पूर्णता करने के लिये हमें विशेष सुप्रबन्ध करना चाहिये ।

मैं आपको यहाँ कहना चाहता हूँ कि अमेरिका की 'येल युनिवर्सिटी' में और 'बर्लिन युनीवर्सिटी' में योग का अभ्यास पाठ्य क्रम में रखा गया है, और वहाँ के अध्यापक भारतवर्ष में आकर प्राथमिक योग शिक्षा प्राप्त करके तीन वर्ष पूर्व ही वापस गये हैं । इसलिये आप का अपनी पाठशालाओं के अभ्यास क्रम में योग साधन को रखना समय के पूर्व नहीं है । जर्मनी और अमेरिका से बहुत पीछे तो हमें रहना नहीं चाहिये ।

अब एक बात का विचार करना है । वह बात यूरोपीय पद्धति के द्वारा वेद का आन्दोलन और संशोधन करने की रीति है । इस रीति के विषय में यहाँ कुछ कहना चाहिये । यूरोप के विद्वान् तथा उस पद्धति से विचार करने वाले स्वदेशी विद्वान् जिस पद्धति से विचार करते हैं, वह पद्धति सदोष नहीं है, परन्तु अधूरी है । इस पद्धति को 'विवेचक पद्धति' कहते हैं । इस पद्धति से भी हमें उत्तम सहायता मिल सकती है, परन्तु इस पद्धति की अपूर्णता को समझना चाहिये, उसकी न्यूनताओं को जानने के पश्चात् ही उससे हम काम ले सकते हैं, परन्तु जो उस पद्धति को अपना नहीं सके, वे ही उससे विचित्र अनुमान करते हैं । जो लोग केवल यूरोपीय पद्धति से वेद की खोज करते हैं उनसे इसी प्रकार की अशुद्धि हो रही है । अतः उनसे जनता को तथा संशोधकों को भी सावधान होना चाहिये ।

इस समय तक मैंने दो ही बातें आपके सामने रखीं । वे ये हैं—(१) ऋषि मण्डली की सहायता प्राप्त करने के लिये आर्ष ग्रन्थों का शुद्ध मुद्रण करना और आवश्यक सब प्रकार की सूचियाँ निर्माण करना और (२) योग साधन की ओर अपना पग रखना और आत्मानुभव प्राप्त करने का यत्न करना । पहिला सुगम है और दूसरा प्रयत्न-साध्य है । दूसरे के अभाव में पहिले की पूर्णता शास्त्रीयता के साथ की जाय तो भी आज की कठिनता दूर हो सकती है ।

आज वेदों के सुबोध पुस्तक लोग चाहते हैं। इस माँग को पूर्ण करने के लिए और प्रामाणिक अनुवाद सस्ते में देने के लिए इस समय हम सबको बड़ा प्रयत्न करना चाहिये। इस कार्य को करने में अनेक कठिनाइयाँ है, उनको हटाने के लिए मैंने दो उपाय यहाँ बताये हैं। और भी उपाय हैं। उन सबका एक पूर्ण कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है, परन्तु उस सबका निर्देश इसी समय करना ही चाहिये, ऐसी कोई बात नहीं है। क्योंकि यदि कोई संस्था इस कार्य को करने का भार सिर पर ले और उसके लिये हिम्मत धारण करे, तो उस संस्था के सामने सम्पूर्ण कार्यक्रम रखा जा सकता है।

मैं वेद के प्रामाणिक अनुवाद निर्माण करने के लिये अत्यन्त आवश्यक 'साधन-ग्रन्थ' के निर्माण करने के कार्य को इस समय अत्यन्त उपयुक्त समझता हूँ। इस समय इसके करने न करने पर हमारे भविष्य काल की स्थिति अवलम्बित है, ऐसा मैं मानता हूँ। इसमें हजारों रुपये डालने चाहिएँ अतः यह कार्य कोई अकेला असहाय पंडित कर नहीं सकता। बड़ी धनवाली संस्था ही इस कार्य को कर सकती है। इसलिये यह मैंने अपने हृदय की बात आपके सामने रखी है। आप इसे पसन्द करेंगे तो इस कार्य को चलाने का प्रबन्ध करिये, यदि आपने इस कार्य को पसन्द न किया, तो मैं यह समझूँगा कि मैं इसका महत्व आपको समझा नहीं सका।

वैदिक धर्म का विजय हो, वैदिक धर्मियों का यश बढ़े, परमेश्वर का मार्ग हमारे सम्मुख प्रकाशित हो।

इसके पश्चात् स्नातिका सुशीला देवी कन्या गुरुकुल देहरादून, पं० चन्द्रमणि निरुक्त भाष्यकार, पं० भगवद्दत्त वेदालंकार, पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति, पं० विश्वनाथ, पं० मुक्तिराम ने अपने-अपने विद्वत्ता-पूर्ण निबन्ध पढ़े। इसके पश्चात् निम्न दो प्रस्ताव पास हुए।

पहला प्रस्ताव आचार्य देवशर्मा ने इस विषय का उपस्थित किया कि वेद-भाष्य को संपूर्ण करने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन एक वेद-मण्डल स्थापित किया जाय और इसके लिए तीन लाख रुपया की लिमिटेड कम्पनी बनाई जाय। इस प्रस्ताव का अनुमोदन आचार्य रामदेव ने किया। प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुआ।

दूसरा प्रस्ताव पं० देवशर्मा ने इस आशय का उपस्थित किया कि ऋषि दयानन्द के हस्तलिखित ग्रन्थों का फ़ोटो लिया जाय क्योंकि उनका काग़ज़ जरजर हो चुका है। पं० ब्रह्मदत्त 'जिज्ञासु' ने इस प्रस्ताव का प्रबल अनुमोदन किया।

४. आर्य सम्मेलन

शुक्रवार, २६ चैत्र १९९२ को मध्याह्नोत्तर ३ से ५॥ तक आर्य सम्मेलन की प्रथम

बैठक श्री घनश्यामसिंह एम० एल० ए० के सभापतित्व में हुई। पं० ठाकुरदत्त शर्मा ने अपना स्वागत अभिभाषण पढ़ा जिसका सार नीचे दिया जाता है—

उपस्थित देवियो और भद्रपुरुषो !

मुझे आप धर्म के भाई बहिनों का स्वागत करने में अत्यन्त हर्ष है। आप लोग जो कष्ट करके यहाँ पधारे हैं इसके लिए हम सब आपका हार्दिक धन्यवाद करते हैं।

प्रभु की महान् कृपा से आर्यसमाज बच्छोवाली ने अपने ५८ वर्ष पूरे किए हैं। और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने प्रचार काम करते हुए ५० वर्ष पूरे किए हैं। सभा की स्वर्ण-जयन्ती और आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव इकट्ठे मनाए जा रहे हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने ५० वर्षों में जो कार्य किया है उसका वर्णन आर्यसमाज के इतिहास में, जो श्रीमान् पं० चमूपति ने एकत्र किया है, लिखा जा चुका है। इसलिए मुझे यहाँ उसके वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। मैं आपसे केवल यह निवेदन करना चाहता हूँ कि आप जो महानुभाव इतने उत्साह से इकट्ठे हुए हैं वह भविष्य के लिए उत्तम प्रोग्राम बनाने का यत्न करें, ताकि बालब्रह्मचारी महर्षि श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती का लगाया हुआ यह पौदा दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करता जावे। मैंने सदा से यही समझा है कि ऋषि दयानन्द इस युग के आचार्य हैं, स्मृतिकार हैं, उनकी बुद्धि वेदोक्त ज्ञान से भरपूर थी, उन्होंने इस युग के लिए जो उचित था उसी प्रकार के नियम (अर्थात् स्मृति) सत्यार्थप्रकाश तथा संस्कारविधि में हमारे लिए बना दिए हैं। परन्तु कुछ आर्य भाई अपने-अपने विचारों से आजकल यह कहते सुनाई देते हैं कि वह युग और था अब उन्नति अधिक हो गई है, विचार अधिक विस्तृत हो गए हैं, इसलिए हर एक बात को वैसे ही हमको न मानना चाहिए। मैं मानता हूँ कि ऋषि दयानन्द ने हमारी बुद्धियों पर ताला नहीं लगाया है और हम सत्य को ग्रहण और असत्य को छोड़ने को हर समय तय्यार हैं। हमारे लिए स्वतः प्रमाण केवल वेद हैं परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुद्धि के अनुसार यदि परिवर्तन करना चाहे तो नियम कोई भी दृढ़ न रहेगा और चारों ओर आपाधापी हो जावेगी। इसलिये आर्यसमाज के मन्तव्य वही रहने चाहिएँ जो कि उसके प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द ने आदेश किए हैं। किसी स्थान पर परिवर्तन की आवश्यकता इस युग के अनुसार प्रतीत होती हो तो आर्यसमाज के सब विद्वानों को इकठ्ठा कर कई दिन विचार करके जो फ़ैसला हो, उसकी घोषणा सर्वसाधारण के लिए कर देनी चाहिए। मैं बहुत दिनों से देख रहा हूँ कि हमारे बड़े-बड़े अधिकारी लैक्चरों में ऐसी बातें अब कहते रहते हैं, जो कि हो सकता है कि अच्छी हों, परन्तु ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के अनुकूल कदापि नहीं होतीं। मेरे इस कथन का कदापि यह तात्पर्य न समझा जावे कि मैं विचार की स्वतंत्रता को रोकता हूँ, मेरा विचार यह है कि प्रारंभिक नियमों को छोड़ कर शेष गौण बातों में विचार भेद होने

पर किसी भी सभासद का बहिष्कार न होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपने दृष्टिकोण से सोचने और अमल करने का पूर्ण अधिकार है। भूल तब होती है जब प्रत्येक मनुष्य अपने विचार को आर्यसमाज के नियम कहने लगता है और उनका उपदेश देना आरम्भ करता है। विचार-भेद को सहन न करना भूल है, और विचार-भेद को हठ-पूर्वक दूसरों पर थोपना इससे भी बढ़कर भूल है। आर्यसमाज के प्रचारकों को प्रचार तो वस्तु का करना चाहिए जोकि ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों के अनुकूल है या जिसको सारा समाज पास कर देवे कि यह हमारे नियम हैं। इससे झगड़े न होंगे, अन्यथा दूसरे मतों की भाँति इसमें भी फ़िरक़े होते जावेंगे और आर्य-धर्म भी एक मत या कई मतों का संग्रह ही हो जावेगा। इसमें यह भी ध्यान रखना चाहिए, कि बाहरी रहन-सहन को धर्म का नियम न मान लिया जावे। इसमें अनायास झगड़े होते हैं। मैंने अनुभव किया कि कई हैट पहिननेवाले समाज में इसलिए नहीं आते कि दूसरे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। सादगी एक विशेष प्रकार की बेढंगी पोशाक को ही समझ रक्खा है।

आर्यसमाज के सोचनेवाले यह अनुभव कर रहे हैं कि आर्यसमाज की उन्नति कुछ रुकी हुई है। कुछ बड़े-बड़े आदमी अलग भी होते जाते हैं। नए आदमी बहुत कम सम्मिलित होते हैं, और जो हैं उनमें पहिला-सा उत्साह नहीं है। इनके कारणों को सोचना और उन पर चलना हमारा कर्तव्य है। विचार-भेद के लिए Toleration न होना भी इसका एक कारण है। परन्तु सबसे बड़ा कारण यह है कि आर्यसमाज में भक्ति-भाव नहीं है। भक्ति से निष्काम सेवा का भाव आता है।

आर्यसमाज के प्रचार के वास्ते आर्य प्रतिनिधि सभा ने उपदेशक रखे हुए हैं। परन्तु मेरा विचार है कि आर्यसमाज का प्रचार तब इससे अधिक होता था, जब हर एक सभासद अपने को प्रचारक समझता था, लोग अपने काम से समय निकाल कर वैदिक धर्म का सन्देश लोगों तक पहुँचाते थे, जब महात्मा मुंशीराम जैसे कामयाब वकील भी दोतारा लेकर गलियों में गाते फिरते थे, जब आर्यसमाज के नगर कीर्तनों में बड़े से बड़े आदमी स्वयं भजन गाकर सन्देश सुनाया करते थे, जब गली या बाज़ार में खड़े होकर उपदेश देना अपमान न समझा जाता था। मैं अब भी वैसा ही होने की आवश्यकता अनुभव करता हूँ। इसके साथ ही वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम की वृद्धि भी होनी चाहिए। वानप्रस्थी बैठ कर और संन्यासी घूम कर बहुत प्रचार कर सकते हैं।

खेद के साथ मेरा अनुभव यह है कि आर्यसमाज के अन्दर संन्यासियों की प्रतिष्ठा नहीं है। इसी लिए हमको संन्यासी कम दिखाई देते हैं। कोई इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं

है कि संन्यासी जहाँ चाहे जा बैठे और उसको एक घर से या सबसे मिलकर भी हर प्रकार का आराम मिलता रहे और वह जैसी उसकी योग्यता है जनता में काम करता रहे। समाजें उसी को भोजन भी देती हैं और आओ-भगत भी करती हैं जो लैक्चर दे सकता है, अच्छी कथा कर सकता है, वह भी उतने दिन जब तक यह कार्य होता है। संन्यासियों का ही नहीं तो भला वानप्रस्थियों का हर स्थान में कैसे प्रबन्ध हो सकता है? इनके प्रबन्ध करने का भाव हममें होना चाहिए। मैंने बड़े-बड़े अच्छे-अच्छे संन्यासी रुलते देखे हैं, सिवाय कुछ एक के जो अपने व्याख्यानों से प्रसिद्ध हो गए हैं।

आर्यसमाज की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि वैदिक शिक्षाओं को हर देश के लोगों के लिए सरल कर दिया जावे और वैदिक अनुसंधान के लिये विशेष योजना की जावे। परन्तु आर्यसमाज का मुख्य कर्तव्य वेद अनुसंधान ही है। आत्मिक उन्नति भी इससे हो सकती है। इसीलिए श्री० स्वामी जी महाराज ने नियम बनाया हुआ है कि—वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

सामाजिक सुधार में आर्यसमाज ने जिन-जिन क्षेत्रों में कार्य किया अब उन क्षेत्रों में हर कोई दिलचस्पी लेता है। आर्यसमाज ने आरम्भ में स्त्री-शिक्षा, स्त्रियों का समान अधिकार, स्वदेशी प्रचार, स्वदेश प्रेम, बड़ी आयु का विवाह, व्यर्थ प्रथाओं का हटाना, जाति संगठन आदि बीसियों क्षेत्रों में क़दम बढ़ाया और खूब कार्य किया। वह बातें अब प्रचलित हो गई हैं और जहाँ हैं वहाँ आर्यसमाज के साथ दूसरे सुधारक भी बराबर काम कर रहे हैं। सामाजिक सुधार के एक काम पर अभी आर्यसमाज को जोर देने की आवश्यकता है, क्योंकि यद्यपि दूसरी सोसाइटियाँ इस काम को भी कर रही हैं परन्तु वह इस प्रकार से कर नहीं सकतीं, जैसा कि आर्यसमाज कर सकता है। वह है दलितोद्धार का कार्य। ऋषि दयानन्द ने वेद के प्रमाणों से लिखा है कि वेद की वाणी प्राणि-मात्र के लिए है। इससे भी तो हमारा धार्मिक कर्तव्य है कि हम उन-उन लोगों तक वेद पहुँचाएँ, जिनको केवल जन्म के कारण से इनसे वंचित रखा जा रहा है। ऋषि जन्म से बढ़कर गुण, कर्म और स्वभाव को दर्जा देता है। वह प्रत्येक मनुष्य को उन्नति के क्षेत्र में समान अधिकार की आज्ञा देता है। दूसरे लोग तो इतना कहेंगे कि अछूत अब किसी को न समझो, मन्दिर में जाने दो, कुएँ से पानी भरने दो, परन्तु आर्यसमाज कहता है कि वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जो चाहे अपने गुण, कर्म, स्वभाव से बन सकता है और आर्य जाति का अंग बन सकता है, वर्णश्रम धर्म का अनुयायी हो सकता है। हर्ष का स्थान है कि आर्यसमाज इस कर्तव्य से असावधान नहीं है।

फिर श्री घनश्यामसिंह सभापति ने अपना अभिभाषण पढ़ा जिसका सार नीचे दिया जाता है—

पञ्जाब आर्य प्रतिनिधि सभा के अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव पर होनेवाले आर्य सम्मेलन का सभापति बना कर आप लोगों ने जो मुझे गौरव दिया है उसके लिये मैं आप लोगों को धन्यवाद देता हूँ।

आपको इस महोत्सव के मनाने का अधिकार केवल इसलिये ही प्राप्त नहीं है कि आप की आर्य प्रतिनिधि सभा को स्थापित हुए पचास साल बीत गये हैं। पचास साल और साठ साल की कई ऐसी संस्थाएँ हुआ करती हैं जिनका लोग नाम भी नहीं जानते। आपने इन पचास वर्षों में अपने पंजाब प्रान्त में—नहीं-नहीं सारे भारतवर्ष में—महर्षि के मिशन की मुहर लगा दी है, अनाथ और विधवाओं को आश्रय दिया है, अविद्या का अन्धकार दूर करने का यत्न किया है। देव वाणी को जाग्रत् करने का साहस दिखाया है। आर्य भाषा को शिक्षा का माध्यम बना कर दिखा दिया कि जो नियम संसार के शिक्षणालयों पर लागू है वही भारत वर्ष के लिये भी श्रेयस्कर है। इन पचास वर्षों में आपने जो-जो कार्य किये हैं वे जगत् विख्यात है, उनकी गणना करना यहाँ सम्भव नहीं। आपके ये कार्य हैं जिनसे आपको इसके महोत्सव मनाने का अधिकार प्राप्त होता है। महर्षि के आदर्श को आगे बढ़ाने में आपने जो महान् यज्ञ किया है वही इस महोत्सव को वास्तविक बनाता है।

दार्शनिक तत्वज्ञान के साथ-साथ हमें अपने व्यावहारिक जीवन की ओर भी ध्यान देना होगा। हमें यह देखना होगा कहीं हमारा व्यावहारिक जीवन ऐसा तो नहीं होता जा रहा है जो कि हमारी संस्कृति हमारी सभ्यता का बाधक सिद्ध हो। हमारे ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर इसकी चेतावनी दी गई है कि हमारा जीवन हमारी संस्कृति से विभिन्न न हो। व्यावहारिक जीवन पर विचार करते ही सहसा मेरी दृष्टि अपने रहन-सहन पर पड़ती है। हमारे रहन-सहन के मूल मन्त्र ये हैं—

(१) सादा जीवन और उच्च विचार।

(२) मितव्ययता।

(३) (Decentralisation) अकेन्द्रीयता।

'सादा जीवन और उच्च विचार' तो आर्य जीवन का मूल मन्त्र है। आर्य ग्रन्थों को हम देखें, आर्यों के इतिहास का हम मनन करें तो हमें यह स्पष्ट होगा कि हमारे सम्पूर्ण जीवन में सादगी और विशालता पाई जाती है। जिन ऋषि-मुनियों ने जटिल से जटिल प्रश्नों को हल किया, संसार को सबसे पहिले सबसे बड़ी चीजें—विज्ञान में, साहित्य में, कला में दीं, उनका जीवन किस प्रकार का था। ऋषि-मुनियों तथा ब्राह्मणों को छोड़ कर यदि हम अपने क्षत्रियों का आदर्श भी देखें तो हम मानेंगे कि हमारे नराधिपतियों में सब ऐश्वर्य रहते हुए भी उनका जीवन सादा था। वैश्य तो सादा जीवन के लिये प्रसिद्ध ही थे। जिन

वैश्यों के दान से बड़े-बड़े मठ, मन्दिर, घाट आदि आज भी बने हुए हैं वे बहुत सादा जीवन व्यतीत करते थे।

हमें यह न पूछना चाहिये कि भारत गाँवों में बसता है। हम ऐसा कोई कार्य न करें जिससे भारत की आत्मीयता को धक्का पहुँचे। हम शहरवाले यदि गाँवों में नहीं रह सकते तो एक कामना अवश्य कर सकते हैं, अर्थात् शहर में गाँवपना ला सकते हैं। मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि शहर में रहते हुए गाँव का सारा जीवन हम अपने में धारण कर सकते हैं। मेरे कहने का अनर्थ न हो इसलिये मैं यह साफ़ करना चाहता हूँ कि मेरे कहने का यह अर्थ बिल्कुल नहीं कि शहर में जो उपयोगी चीजें हैं यथा रेल, ट्राम, तार इनका हम उपयोग न करें। विज्ञान द्वारा प्राप्त सम्पूर्ण उपयोगी चीजों का उचित प्रयोग करने से मैं कदापि मना नहीं करता। मैं तो कहता हूँ इन सबको करते हुए भी हम अपना जीवन सादा बना सकते हैं।

दूसरा रोग जो हमें लग रहा है वह फ़जूलख़र्ची है। फ़जूलख़र्ची एक फ़ैशन हो रहा है। इस सम्बन्ध में मुझे अपनी बहिनों से अधिक निवेदन करना है। घर को यदि सुखी बनाना हो तो मितव्ययता हमें अवश्य धारण करनी चाहिये। कई प्रकार की फ़जूलख़र्ची है जिनका यहाँ वर्णन करना अनुपयुक्त होगा। हमें इसमें भी दूसरे की अन्धी नक़ल नहीं करनी चाहिये। जो ख़र्च एक के लिये फ़जूल न हो वही उससे कम आमदनी वाले के लिये फ़जूल हो सकता है। इसलिये हर एक को अपने सामर्थ्य के अनुसार उत्तम आवश्यक और हितकारी कार्य में ख़र्च करना चाहिये, दूसरे के देखा-देखी ख़र्च नहीं करना चाहिये।

दूसरी बात जिसे हमें न भूलना चाहिये वह यह है कि यूरोपीय समाजों की केन्द्रीभूत पद्धति (Centralised System) की हम बिना विचारे नक़ल न करें। जिस पहलू से भी देखिये यूरोपीय सभ्यता केन्द्रीभूत पद्धति का अनुचर है। वहाँ यदि ओषधि चाहिये तो किसी बड़े कारख़ाने से ही मिल सकती है। लण्डन, पैरिस या बर्लिन की रसायनशालाओं पर वहाँ के दूर-दूर के गाँव के रहनेवालों को अपनी ओषधि के लिये मुँह ताकना होता है, भोजन के लिये रोटी चाहिये तो रोटी के कारख़ानों (बेकरी) से लानी होगी। दूध या मक्खन की माँग डेयरियों से पूरी होती है। इस प्रकार के दृष्टान्त बहुत बढ़ाये जा सकते हैं यह बात हमारी आर्य सभ्यता की नहीं। हमारे ऋषियों ने समाज की नींव इस प्रकार डाली थी कि मनुष्य-जीवन के प्रत्येक आवश्यक कार्य के लिये हम स्वतन्त्र थे। दूर के किसी केन्द्र के दास न थे। यह मैं मानता हूँ कि वर्तमान परिस्थति में वैसा करना हमारे लिये सर्वथा सम्भव नहीं और न कुछ अंशों में इष्ट ही है। परन्तु हमारे जीवन का बहुत-सा ऐसा अंग है जो अब भी उसी पुरानी संस्कृति पर चलने से ही श्रेयस्कर और सुन्दर हो सकता है। कुछ हद तक केन्द्रीभूत

पद्धति में भी गुण हैं जिसे हमारे ऋषियों ने भी अनुभव किया था। परन्तु हमें उसकी मर्यादा समझनी चाहिये और मूर्खता से नक़ल नहीं करनी चाहिये। आप लोगों को स्मरण होगा कि यूरोपीय महा समर के काल में यूरोप की क्या दशा हो रही थी? ओषधियों का एक देश से दूसरे देश को जाना कठिन हो गया था। जिन कारख़ानों में रोटियाँ बनती थीं वहाँ युद्ध के सामान बनाने पड़े। परिणाम क्या हुआ? हमारे भारत में भी किनीन की कमी को चिरायता से दूर कहने के उपाय का अवलम्बन करना पड़ा। विलायत में कोई घर किसी भी रोटी के कारख़ाने से नियमित रोटियों से अधिक नहीं ले सकता था। भगवान् की कृपा हुई जो युद्ध और अधिक न चला, नहीं तो परिणाम क्या होता, कहा नहीं जा सकता।

अब मैं आर्यसमाज के कार्यों के सम्बन्ध में कहना चाहता हूँ। आर्यसमाज का कार्य पंजाब में सबसे अधिक हुआ है और हो रहा है जो आपको विदित ही है इसलिए मैं अधिक समय न लूँगा। आर्यसमाज ने शिक्षणालय, अनाथालय, विधवा आश्रम आदि संस्था खोल कर जो अपनी शक्ति का परिचय दिया तथा भारत की सेवा की है वह प्रसिद्ध ही है।

शिक्षणालयों में गुरुकुल का नाम स्वाभाविक रूप से ही प्रथम आ जाता है। गुरुकुल ने चाहे जो किया हो या न किया हो उसके पक्ष में या विपक्ष में चाहे जो कुछ भी कहा जाय परन्तु गुरुकुल ने एक जो सबसे बड़ी बात की है उसके लिए गुरुकुल और उसके संस्थापक महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) चिर-स्मरणीय रहेंगे। शिक्षा का माध्यम आर्य भाषा सबसे पहिले गुरुकुल ने ही बनाया। लार्ड मैकाले की शिक्षा सम्बन्धी नीति का सब से पहिले क्रियात्मक रूप से किसी ने विरोध कर दिखाया तो वह गुरुकुल और उसके संस्थापक महात्मा मुन्शीराम ने। हमारे लिये कोई भी शिक्षा प्रणाली स्वाभाविक नहीं हो सकती जो मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा को शिक्षा का माध्यम न बनाये। यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसको समझाने के लिए युक्तियों की आवश्यकता हो यह मेरी समझ में नहीं आता।

नागपुर युनिवर्सिटी की शिक्षा-माध्यम कमेटी (Vernacular Medium Committee) के प्रधान की हैसियत से इस सम्बन्ध में बहुत कुछ विचारने का तथा कई विद्वान् सज्जनों की राय जानने का मौक़ा मिला था। इससे मेरी पूर्व की सम्मति और भी दृढ़ हुई कि हमारी शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी भाषा नहीं रह सकती और कदापि नहीं रहनी चाहिये। ज्ञान के प्रसार में इससे बढ़ कर दूसरी रुकावट नहीं है।

और दूसरे शिक्षणालयों के सम्बन्ध में कुछ विशेष कहना नहीं। हाँ! एक बात जो कुछ दिनों से मुझे सूझ रही है आप के सम्मुख निवेदन करना चाहता हूँ। सारे भारत वर्ष में आर्यसमाज के जितने शिक्षणालय हैं उनको क्या हम एक सूत्र में करने का यत्न नहीं कर सकते? "आर्य विश्वविद्यालय" (आर्यन युनिवर्सिटी) स्थापित किया जा सके इसके

लिये क्या हम कोई योजना का विचार नहीं कर सकते ? जो युनिवर्सिटी सरकार से भी स्वीकृत (Recognised) हो। इस में कई लाभ हैं। एक तो जो हमारे गुरुकुलों से विद्यार्थी निकले हैं उन्हें पुनः और डिग्रियों की आवश्यकता न होगी। फिर इससे भी बड़ी बात यह है कि जो हमारा विशाल आर्य विश्वविद्यालय होगा वह हमारी संस्कृति की रक्षा करेगा। हम अपने ढंग से रह सकेंगे। आज हमें पंजाब, आगरा विश्वविद्यालयों का मुँह ताकना होता है और अपने शिक्षणालयों को उनके ढाँचे में ढालना होता है। यह बात मैं केवल आपके विचार के लिये पेश करता हूँ।

अब मैं आर्य भाषा के प्रचार की ओर कुछ विचार करना चाहता हूँ। आर्य भाषा (हिन्दी) भारत वर्ष की राष्ट्र भाषा मानी गई है। इसके प्रचार की विशेष ज़िम्मेवारी हम पर है। ऋषि की मातृ-भाषा गुजराती, और उनके ज्ञान की भाषा संस्कृत होते हुए भी ऋषि ने उस समय भी 'सत्यार्थप्रकाश' आदि ग्रन्थों को आर्य भाषा में लिखा, और इस भाषा को ऋषि ने आर्य भाषा कहा है। इसलिए यह निर्विवाद है कि आर्य भाषा के प्रचार और प्रसार का विशेष उत्तरदायित्व हम पर है। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि हम उसे उस हद तक नहीं निभा रहे हैं जितना कि चाहिए, अपने निजके धन्धों में, कृत्यों में हम उसे नहीं अपना रहे हैं।

आर्यसमाज के लिये वेद-भाष्य का प्रश्न एक महत्व-पूर्ण प्रश्न है। वेद हमारे धर्म का आधार है, अतः यह आवश्यक है कि वेद-भाष्य की ओर हम प्रयत्न-शील हों। इसके लिये जो साधन चाहिये उसका हम अनुमान लगावें।

आर्यसमाज के कार्य की पड़ताल करते हुए आर्यसमाज के भविष्य की ओर ध्यान देना आवश्यक है। महर्षि का झंडा किन कुरीतियों के विरुद्ध खड़ा किया गया था, मैं पहिले कह चुका हूँ। उनमें से प्रायः बहुत-सी बातों को साधारण सनातनी भाई न केवल मानने लगे हैं वरन उन पर आचरण भी करने लगे हैं। उन सबको गिनकर मैं आपका समय न लूँगा। समुद्र यात्रा के लिये आज जात-बाहर-छोड़ने-वाले नहीं रह गये। अछूतपन दूर करने के लिये महात्मा गान्धी का जो प्रयत्न चला है वह सर्व-विदित है। परम पूज्य महात्मा पं० मदन-मोहन जी मालवीय भी शूद्रों को, नहीं-नहीं अछूत कहानेवालों को भी मन्त्र-दीक्षा और मन्दिर-प्रवेश का अधिकारी मानते हैं। स्त्री-शिक्षा के लिये तो उन्होंने विशाल कालेज खोला हुआ है। "स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्" अब नहीं रह गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि बहुत-से क्षेत्रों में आर्यसमाज का दिग्विजय हुआ है। इस अंश में अब हम साधारण सनातनी भाइयों को आर्यसमाजी कह सकते हैं। अपने को सनातनी कहते हुए भी साधारणतया वे बहुत-सी

उन बातों को मानते व करते हैं जिनके लिये आर्यसमाज था। अतः इसमें आश्चर्य न होना चाहिये कि हमारी दिग्विजय ही हमारी संख्या की वृद्धि में आड़ आती है। इससे तो विषाद कम और हर्ष अधिक होना चाहिये। आर्यसमाज के संगठन को क़ायम रखते हुए हममें और हमारे सनातनी भाइयों में अन्तर की मात्रा जितनी कम हो उतना ही अच्छा है। जितना ही अधिक वह हमारी ओर आवें उतना ही सम्पूर्ण समुदाय के लिये हितकर है, परन्तु याद रहे विजय की शिथिलता से हम अपने को बचाने का पूर्ण यत्न करें। अभी भी आर्यसमाज के लिये बहुत काम है। महर्षि का मिशन पूरा करने का उत्तरदायित्व आर्यसमाज पर है। यूरोपीय बहिरंग की बढ़ती हुई लहर से अभी भी हमें अपने युवक और युवतियों को बचाना है। कई अंशों में तो हमारा यह कार्य आगे से और भी बढ़ गया है। हर कालेज के पीछे एक सिनेमा हो, नहीं-नहीं बल्कि जितने कालेज हैं उनसे अधिक सिनेमा-गृह हों जहाँ हमारे युवक और युवती प्रायः नित्य जाकर अपना समय, पैसा और विचारों की बरबादी करें—ऐसी सब बातों के रहते हुए कौन कह सकता है कि हमारे लिये कार्य नहीं। मैं आमोद-प्रमोद का शत्रु नहीं, परन्तु मनुष्य जब आमोद-प्रमोद का दास हो जाता है तब वह निन्द्य है।

महर्षि ने देखा कि मत-मतान्तरों के आपसी झगड़ों से हम बलहीन होते जा रहे हैं। उन्होंने उसके विरुद्ध आवाज़ उठाई। आज हम कलह के तो नहीं, परन्तु दूसरी तरह की कलह का शिकार हो रहे हैं। "संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्" का पाठ हम भूल रहे हैं। आप लोग सब बुज़ुर्ग हैं। आर्यसमाज की सेवाओं में उमर बिता चुके हैं। मैं इस योग्य नहीं कि आप लोगों को किसी प्रकार समझा सकूँ। फिर भी कुछ निवेदन किये बिना मन नहीं मानता। मैं अपना परम अहोभाग्य समझता यदि किसी भी दैवी शक्ति से हमारा आपस का कलह दूर हो सकता और हम सच्चे भाई-भाई की तरह गले मिलकर कार्य का सम्पादन कर सकते। हमें आपस में झगड़ने के लिए अवकाश न होना चाहिये। हमारे सामने कार्य बहुत और विशाल है। प्रायः झगड़ों का कारण कुछ भी नहीं हुआ करता। उसकी तह में तमोगुण के सिवाय और कोई चीज़ नहीं हुआ करती। मैं क्या कहूँ, कहना मेरे लिये अनधिकार चेष्टा है। मैं तो अति विनीत भाव से यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि परमात्मा हमें विनय दे, नम्रता-ज्ञान दे, सच्चे त्याग का भाव दे ताकि हम कलह को अपने से दूर हटा सकें।

इसके पश्चात् निम्न-लिखित प्रस्ताव पास हुए—

१. यह सम्मेलन आर्यसमाज के सेवक पं० विष्णुदत्त फ़ीरोज़पुर, बा० घासीराम, ठाकुर निहालसिंह, राय बहादुर ठाकुरदत्त धवन, ला० गङ्गाराम सियालकोट, पं० गङ्गाराम मुज़फ़्फ़रगढ़, पं० आर्यमुनि, स्वामी शुद्धबोध तीर्थ और पं० भीमसेन की शोकजनक

मृत्यु पर दुःख प्रकट करता है और उनके सम्बन्धियों से सहानुभूति प्रकट करता है। इन श्रीमानों ने आर्यसमाज की जो सेवाएँ की हैं उनकी यह सम्मेलन सराहना करता है।

२. यह सम्मेलन केटा भूकम्प के कारण से हुई विनष्टि पर गहरा दुःख प्रकट करता है और इस भूकम्प के कारण जो परिवार और व्यक्ति अनाथ और असहाय हो गए हैं उनके साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है और परमात्मा से प्रार्थना करता है कि वह दुःखी परिवारों को धैर्य दे।

३. भारत वर्ष में आर्यसमाज के जितने शिक्षणालय हैं वे एक सूत्र में बन्ध सकें और उनमें आर्य संस्कृति के अमल की स्वतन्त्रता हो सके। इसके लिए यह उचित प्रतीत होता है कि इन सब संस्थाओं को सम्बद्ध करने के लिए कोई योजना सार्वदेशिक सभा द्वारा की जाय।

४. इस सम्मेलन की सम्मति में प्रत्येक नर-नारी को चाहिए कि अपने गृहस्थ के स्वतन्त्र कार्यों में आर्य भाषा का ही प्रयोग करें। इस सम्मेलन को इस बात का दुःख है कि कुछ ऐसे आर्य भाई हैं जो स्वयं या अपनी अधीनस्थ संस्थाओं में आर्य भाषा के प्रयोग के विरुद्ध कोई अड़चन न होते हुए भी आर्य भाषा का प्रयोग नहीं करते।

५. इस सम्मेलन की सम्मति में सादा जीवन हमारी सभ्यता की विशेषता है जिसकी हर प्रकार रक्षा करना प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है। इसलिए यह सम्मेलन प्रत्येक नर-नारी से अनुरोध करता है कि वह आडम्बरों से दूर रहें और दूसरों को दूर रखने का प्रयत्न करें। आर्यसमाजियों में स्वदेशी और खद्दर का प्रयोग होना चाहिए।

६. आर्यसमाज के संगठन को उन्नतिशील बनाने के लिए आवश्यक है कि कोई भी व्यक्ति सार्वदेशिक सभा, प्रान्तीय सभा तथा आर्यसमाजों के प्रधान व मन्त्री-पद पर सर्वसम्मति होने के सिवा निरन्तर तीन वर्ष से अधिक समय तक न रहे।

७. इस सम्मेलन की सम्मति में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को प्रान्त की स्त्री-आर्यसमाजों तथा आर्यकुमार सभाओं को केन्द्रीय संगठन द्वारा संगठित करने की स्कीम बनानी चाहिए और उनको प्रान्तीय संगठन में संगठित करना चाहिए।

पुनः आदित्यवार १२ एप्रिल को प्रातः ७ से १० तक बा० घनश्यामसिंह एम. एल. ए. के सभानेतृत्व में आर्य सम्मेलन की दूसरी बैठक हुई और निम्न-लिखित प्रस्ताव पास हुए—

८. आर्यसमाज अपने जन्म काल से ही प्रचलित अछूतपन के विरुद्ध रहा है और बड़ी उत्सुकता से इसको मिटाने का यत्न कर रहा है। इसलिये सम्मेलन को इस बात का बड़ा हर्ष है कि इस कष्ट को दूर करने की भावना न केवल हमारे अछूत कहलानेवाले भाइयों के हृदय में नम्रता धारण कर रही है बल्कि सवर्ण कहलानेवाले सनातनी भाइयों

के हृदय में भी इसके लिये नम्रता है। इस सम्बन्ध में महात्मा गान्धी व पं० मदन-मोहन मालवीय आदि सज्जनों द्वारा जो प्रयत्न जारी हैं उससे यह सम्मेलन सन्तोष प्रकट करता है।

९. डा० अम्बेदकर ने अछूतपन के विरुद्ध जो रोश प्रकट किया है उसे स्वाभाविक मानते हुए इस सम्मेलन की सम्मति में उनके इस भाव के लिये कि अछूत कहलानेवाले भाई वैदिक धर्म को त्याग दें अब कोई प्रसंग नहीं, विशेष कर जबकि सवर्ण कहलाने वाले हिन्दू भाई इस रोग को दूर करने के लिये हृदय से प्रयत्न कर रहे हैं। इसलिये यह सम्मेलन अछूत कहलानेवाले समस्त भाइयों से अनुरोध करता है कि वैदिक धर्म को छोड़ने का विचार ही न करें बल्कि अधिकाधिक संख्या में आर्यसमाज में सम्मिलित हों।

१०. यह सम्मेलन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को वेद-भाष्य कराने तथा आर्य साहित्य निर्माण करने के लिये अनुसन्धान विभाग और वैदिक साहित्य विभाग की योजना को कार्य रूप में परिणत करने पर वधाई देता है, और जनता से सानुरोध निवेदन करता है कि वह आर्य-जनता में स्वाध्याय की प्रवृत्ति बढ़ाने के लिये सभा को इन योजनाओं को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दे।

११. इस सम्मेलन की सम्मति में आर्यसमाजों को चाहिये कि वह अपने वार्षिकोत्सवों को वार्षिक सत्संग का रूप दें और इनको करते हुए बाह्याडम्बर तथा प्रदर्शन पर कम से कम व्यय करें। प्रत्येक ज़िले में प्रति वर्ष उत्सव पर आर्य सम्मेलन करने की प्रथा जारी की जावे। उत्सवों तथा सत्संगों के सम्बन्ध में निम्न-लिखित योजना के अनुसार कार्य करना चाहिए—

(क) एक दिन में ३ से अधिक व्याख्यान न हों।

(ख) आर्य पुरुषों में संकीर्तन की प्रथा जारी की जाए और सभासदों को स्वयं हरि-कीर्तन करने के लिये प्रेरित किया जाय।

१२. इस सम्मेलन की सम्मति में आर्यसमाजों को समाज मन्दिर में दैनिक सत्संग, स्नान, व्यायाम तथा आतिथ्य का प्रबन्ध करना चाहिये। शिक्षणालयों और कन्या पाठ-शालाओं के लिए मन्दिरों से प्रथक् प्रबन्ध होना चाहिये।

१३. यह सम्मेलन आर्य पुरुषों में वैदिक संस्कारों की प्रथा को विशेष रूप से जारी करने के लिये आर्य भाइयों को निम्न प्रकार से संस्कार करने की प्रेरणा करता है।

(क) अन्त्येष्टि तथा विवाह संस्कार के अतिरिक्त अन्य संस्कारों में निमन्त्रित भाइयों का केवल इलायची मिश्री से ही सत्कार किया जाय।

(ख) विवाह संस्कारों पर बरातियों की संख्या पच्चीस से अधिक नहीं होनी चाहिये।

(ग) संस्कारों पर विदेशी वस्तुओं का प्रयोग और प्रदर्शन तथा आडम्बर न करना चाहिये।

(घ) आर्यों को विवाह संस्कारविधि के अनुसार सूर्यास्त से दो घण्टा पूर्व ही शुरू करना चाहिये।

(ङ) अवैदिक युक्ति-हीन रूढ़ियों तथा प्रथाओं को बन्द किया जाय।

१४. इस सम्मेलन की सम्मति में पंजाब की देवियों में दिन-प्रति-दिन बढ़ती हुई पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव को रोकने तथा उनको अपने धार्मिक साहित्य के प्रभाव में लाने के लिये आवश्यक है कि आर्यसमाज के अधीन चलनेवाली आर्य कन्या पाठशालाओं में संस्कृत और आर्य भाषा द्वारा धार्मिक साहित्य और व्यावहारिक ज्ञान का उच्च शिक्षण दिया जाय और इस आशय को पूर्ण करने के लिये आठवीं श्रेणी तक अंग्रेज़ी की शिक्षा देना बन्द किया जाय।

(क) पंजाब सरकार के शिक्षा विभाग को प्रेरित किया ज़ाय कि वह सरकारी कन्या पाठ-शालाओं में हिन्दी को मुख्य स्थान दे।

(ख) कन्या पाठशालाओं में हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाया जाय। आर्य पुरुषों को ऐसी सरकारी पाठशालाओं का बहिष्कार करना चाहिये जहाँ हिन्दी को शिक्षा का माध्यम न बनाया गया हो।

(ग) इस सम्मेलन की राय में पंजाब की हर एक म्यूनिस्पल कमेटी वा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का यह कर्तव्य है कि अपने ख़र्च से उर्दू स्कूल के साथ-साथ हिन्दी स्कूल भी अपने ख़र्च से चलावे।

१५. कुछ देसी रियासतों में वैदिक धर्म के उपदेश व आर्य संस्कृति और सभ्यता के प्रचार में अड़चनें अनुभव हुई हैं। वे अड़चनें इस सम्मेलन की सम्मति में अनुचित हैं और यह सम्मेलन अनुरोध करता है कि इसमें किसी प्रकार की अड़चन न हो। यह सम्मेलन जनता से प्रार्थना करता है कि रियासतों से पीड़ित भाइयों की सहायता व उनसे सहानुभूति प्रदर्शित करें।

१६. पं० रामचन्द्र देहलवी के विरुद्ध जो आज्ञा अब तक क़ायम है उसका यह सम्मेलन विरोध करता है और हिज़ हाईनैस निज़ाम हैदराबाद से प्रार्थना करता है कि इस आज्ञा को रोक दें। इस सम्बन्ध में महाराज श्री कृष्णप्रसाद ने एक हिन्दू डैपूटेशन को मिलने की कृपा दिखलाई और इन प्रश्नों पर विचार करने का भी आश्वासन दिया। इसके लिए यह सम्मेलन धन्यवाद देता है।

१७. इस सम्मेलन की सम्मति में आर्य परिवारों के पारिवारिक सदाचार के आदर्श को

उन्नत करने के लिए एसैम्बली के सामने जो आर्य विवाह बिल पेश हुआ है उसका यह सम्मेलन पूर्णतया अनुमोदन करता है और हर जगह की आर्यसमाजों से अनुरोध करता है कि अपने अनुमोदन के प्रस्ताव की एक प्रति भारतीय सरकार के पास और दूसरी प्रति सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में भेज दें।

१८. यह सम्मेलन भारतीय सरकार से अनुरोध करता है कि आर्य विवाह बिल के कानून बनने में सहायक हो। और चूँकि ग़ैर-सरकारी बिल के असैम्बली में लिए जाने में समय का अभाव होता है इसलिए सरकार से सानुरोध आग्रह है कि वह इस बिल को सरकारी बिल के रूप में पेश करे और समय दे।

सोमवार, १३ एप्रिल मध्याह्नोत्तर २॥ बजे आर्य सम्मेलन की तीसरी बैठक प्रधान महोदय के अनुपस्थित होने के कारण प्रो० महेन्द्रप्रताप के सभानेतृत्व में हुई और निम्न प्रस्ताव पास हुए—

१९. इस सम्मेलन की सम्मति में आर्य परिवारों के पारिवारिक सदाचार के वातावरण को उन्नत करने के लिये ४८ साल से अधिक आयु के विधुर को, ४० से ऊपर की आयु की विधवा के विवाह को (आपत्काल को छोड़ कर) निन्दित समझना चाहिए तथा कुमारी कन्याओं के विधुरों के साथ होने वाले विवाहों को भी निन्दनीय तथा दण्डनीय समझना चाहिये।

२०. यह सम्मेलन आर्य सार्वदेशिक सभा से निवेदन करता है कि वह प्रति वर्ष विविध आर्य प्रतिनिधि सम्मेलन किया करे। इसमें सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध प्रतिनिधि सभाओं के प्रतिनिधि प्रान्तों में सम्मिलित हों।

२१. यह सम्मेलन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से अनुरोध करता है कि वह विदेश प्रचार निधि द्वारा पंजाब के समीपवर्त्ती देशों (अफ़ग़ानिस्तान, मध्य ऐशिया तथा चीन) में वैदिक धर्म प्रचार के लिये विशेष योजना करे।

(क) देश-देशान्तरों में वैदिक धर्म प्रचार के लिए पण्डित गुरुदत्त द्वारा संस्थापित वैदिक मैग़ज़ीन को फिर से जारी किया जाय।

(ख) इस समय आग़ाख़ानी, ईसाई और मुसलमान लोग आर्य जाति के साथ छल-पूर्ण व्यवहार कर उसे हानि पहुँचाने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह सम्मेलन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से विशेष अनुरोध करता है कि वह इनका उचित प्रतिकार करने के लिए एक समिति का निर्माण करे।

२२. इस सम्मेलन की सम्मति में वेद-प्रचार प्रणाली को वैदिक आश्रम मर्यादा के अनुकूल

बनाने के लिये योग्य व्यक्तियों को धर्म-प्रचार, लोक-सेवा तथा विद्या-प्रचार के काम करने के लिए वानप्रस्थ तथा संन्यासाश्रम में प्रविष्ट होना चाहिए।

९. शिक्षा सम्मेलन

शुक्रवार, १० एप्रिल को सायं ७ से ८॥ तक शिक्षा सम्मेलन महात्मा हंसराज के प्रधानत्व में हुआ। महात्मा जी ने कहा कि यह शिक्षा जिसे हम 'युनिवर्सिटी शिक्षा' कहते हैं इसका आरम्भ उस समय हुआ जब इस देश में अंग्रेज़ी राज्य का दख़ल हुआ। सबसे पहले पादरियों ने स्थान-स्थान पर स्कूल बनाए और ईसाई धर्म का प्रचार किया। इसके पश्चात् गवर्नमेंट ने भी लार्ड रिपन के समय में स्कूल बनाए। जिस समय ऋषि दयानन्द का स्वर्गवास हुआ उस समय आर्यसमाज ने डी० ए० वी० कालेज की बुनयाद डाली। उस समय इस्लामिया, सनातनधर्म और सिक्खों का कोई कालेज नहीं था। केवल ईसाइयों का कालेज और गवर्नमेंट कालेज थे। डी० ए० वी० कालेज में हिन्दी को माध्यम बनाया गया। इसके पश्चात् दूसरे सम्प्रदायों ने भी अपने-अपने कालेज खोले और इस भान्ति आर्यसमाज का अनुसरण किया। इस समय पंजाब का कोई अभागा ज़िला होगा जिसमें आर्यसमाज का कोई स्कूल या कालेज नहीं। पंजाब में इन प्राइवेट स्कूलों का जाल बिछा हुआ है। यह देखकर कई प्रकार के विचार सरकारी और ग़ैर-सरकारी दुनिया में पैदा हुए। जब ग़ैर-सरकारी स्कूलों की इस क़दर उन्नति हुई तो सरकारी स्कूलों में लार्ड रिपन की नीति तब्दील की गई और ग़ैर-सरकारी स्कूलों की ग्रान्टें आदि शुरू हो गईं। अब ग़ैर-सरकारी स्कूलों और कालेजों के विरुद्ध प्रबल प्रापेगण्डा हो रहा है और ग्रान्टों को कम किया जा रहा है। सम्बद्ध (recognition) करने के नियमों को सख़्त किया रहा है। ग़ैर-सरकारी तरीक़ा-ए-तालीम को बिगाड़ने की कोशिश की जा रही है।

सीमान्त प्रान्त में मुसलमान वज़ीर ने हिन्दी-घातक सरक्यूलर जारी किया है जिसका प्रयोजन यह है कि लड़कियों को हिन्दी सिखानेवाली कन्या पाठशालाओं की ग्रान्टें बन्द कर दी जायँ यदि वे हिन्दी की शिक्षा जारी रखें। यह यत्न किया जा रहा है कि स्कूलों में केवल उर्दू पढ़ाई जाय।

हमारा कर्त्तव्य यह है कि अपने घर को सँवारें और गवर्नमेंट पर ज़ोर दें कि वह हमारी सहायता करे, और पंजाब में हिन्दी की दुर्गति को दूर करके इसकी उन्नति करे। गवर्नमेंट का कर्त्तव्य है कि वह हमारी आवाज़ को सुने। पंजाब में यह हालत है कि मुसलमान मुलाज़मतों में अपने हिस्से से भी ज्यादा चाहते हैं, और हिन्दू नौजवान यूँही भटक रहे हैं। इसके लिए जरूरी है कि हम अपने बालकों के अन्दर दस्तकारी की आदत डालें।

दूसरा रास्ता यह है कि जो हमारे ऐसे युवक हैं जो रुपया की कमी के कारण अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते वह हाथ से काम करके अपनी रोटी कमाना सीखें। अपनी शिक्षा के तरीक़ा में हमें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि हमारे युवक हाथों से काम करके रोटी कमाना सीखें। जो जाति अपने नवयुवकों के लिये ऐसा कर रही है वह मुबारकबाद की मुस्तहक है। स्कूलों का यह जाल जो देश में फैला हुआ है इसका बहुत लाभ है। बहुत से लोगों ने शिक्षा से लाभ उठाया है, इसका परिणाम यह भी हुआ है कि पहले आर्यसमाज का जो विरोध होता था वह बहुत हद तक कम हो गया है। हमें अपने स्कूलों में हिन्दी अनिवार्य क़रार देनी चाहिये, और हिन्दी-घातक सरक्यूलर के विरुद्ध प्रबल प्रतिवाद करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह विशेषतया याद रखा जाना चाहिये कि हमारे स्कूलों में धार्मिक शिक्षा अच्छी प्रकार दी जाय। शिक्षण-संस्थाओं को पूरी तरह लाभकारी बनाया जाय यहाँ तक कि हिन्दी भाषा की आज़ादी इस देश में हो।

फिर डा० भगवानदास एम० एल० ए० ने वक्तृता प्रारम्भ करते हुए कहा कि वे तीस वर्ष के पश्चात् यहाँ आए हैं। आर्यसमाज का इतना बड़ा भारी महोत्सव देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई है। देवियों और बच्चों के उत्साह को देखकर वे हैरान हो गए हैं। इतना उत्साह उन्हें अपनी ७० वर्ष की आयु में पहली वा दूसरी बार देखने को मिला है।

उन्होंने बतलाया कि बच्चों के माता, पिता और आचार्य तीन शिक्षक होते हैं। तीनों में से माता का दर्जा बड़ा है। पहले चार-पाँच वर्षों में बच्चे को जो शिक्षा माता दे सकती है वह आचार्य और पिता नहीं दे सकते। परन्तु शोक है कि हम होनेवाली माताओं को शिक्षा ही नहीं देते। शिक्षा सभ्यता का मूल है। यदि शिक्षा अच्छी हो तो सभ्यता भी अच्छी होगी वरना नहीं; यह देश का दुर्भाग्य है कि हमारे शिक्षा देनेवालों की बुद्धि तामसिक हो गई है।

वक्ता महोदय ने बतलाया कि आजकल जो बेकारी की समस्या दिन प्रति दिन उग्ररूप धारण कर रही है उसका कारण यह है कि हमारी शिक्षा प्रकृति के अनुकूल नहीं है। विद्यालयों और कालेजों के लिए यह आवश्यक है कि वे विद्यार्थी की प्रकृति को पहचानें। जिस बालक का विद्या में दिल लगे उसे विद्या पढ़ाई जाय। जिस बालक का दिल लड़ाई झगड़े में लगता हो उसे क्षत्रियत्व की शिक्षा देनी चाहिए और हकूमत के तरीकों की शिक्षा दी जाय। गुण और स्वभाव का पहचानना सच्चे आचार्य का काम है। जब तक ऐसा न हो तब तक शिक्षा का सुधार असम्भव है। गवर्नमेंट स्कूलों में भी यही तरीका होना चाहिए कि पहले बालक की प्रकृति पहचानी जाय। इसके लिए बहुत ज़ोर-शोर लगाना अभीष्ट है।

सच्ची शिक्षा फैलाने के लिए महात्मा गान्धी जैसे सच्चे ब्राह्मणों की आवश्यकता है।

उन्होंने बताया कि यदि वे शिल्प की शिक्षा भी देनी प्रारम्भ कर दें तो भेद केवल इतना ही पड़े कि बी० ए० ग्रैजूएटों के स्थान में बी० काम० ग्रैजूएट हो जायँगे। आजकल युनिवर्सिटी की कन्वोकेशन में प्रमाणपत्रों में बी० ए० वा एम० ए० आदि लिखा होता है यह नहीं होना चाहिए बल्कि यह लिखना चाहिए कि अमुक क्षत्रिय बनने के योग्य है और अमुक वैश्य बनने के योग्य है। धर्म का तत्व शिक्षा में दिलाया जाना आवश्यक है। शिक्षा के द्वारा हम धर्म की रक्षा करें। जब तक हम अपने धर्म को न पहचानेंगे तब तक आर्यसमाज और देश का सुधार होना असम्भव है। सच्ची वर्ण-व्यवस्था और सच्ची आश्रम-व्यवस्था ही देश को बचा सकती है।

इसके पश्चात् डा० गोकुलचन्द नारंग, सचिव, पञ्जाब लोकल सैल्फ़ गवर्नमेंट ने वक्तृता दी कि आजकल की शिक्षा युवकों को केवल नौकरी के लिए तय्यार करती है। नौकरियाँ थोड़ी हैं, अतः उच्च शिक्षा प्राप्त किए हुए लोग भी बेरोज़गार रह जाते हैं। अतः आवश्यक है कि प्रचलित शिक्षा-प्रणाली में परिवर्त्तन लाया जाय ताकि युवक अपनी रोटी कमा सकें। स्कूलों में शिल्प की शिक्षा जारी कर दी जाय। साधारण शिक्षा पर डेढ़ करोड़ रुपया के लगभग व्यय होता है। शिल्प-शिक्षा पर केवल आठ लाख रुपया वार्षिक व्यय होता है। इसका कारण यह है कि अभी तक लोगों को शिल्प की शिक्षा ग्रहण करने की इच्छा उत्पन्न नहीं हुई। शिल्प की उन्नति के लिए दो उपाय हैं एक तो यह है कि देश की शिल्प को बेरूनी मुक़ाबिलों से सुरक्षित कर सकें अर्थात् बाहर से आनेवाली चीज़ों पर कर बढ़ाया जाय। यदि आप सरकार को इस विषय में बाधित नहीं कर सकते तो न्यूनातिन्यून इतना तो कीजिए कि स्वदेशी का प्रयोग करें।

इसके अनन्तर प्रो० शिवदयालु एम० ए० ने प्रस्ताव पेश किया जिसका आशय यह था कि बालकों और कन्याओं के शिक्षणालयों में पाठ्य विषयों में शिल्प होनी चाहिए। ला० वृजलाल बी० ए०, एल-एल० बी० ने संक्षिप्त-सी वक्तृता देते हुए प्रस्ताव का अनुमोदन किया और प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

श्री राजेन्द्र कृष्णकुमार एम० ए० प्रिन्सिपल दयानन्द मथुरादास कालेज मोगा ने कहा कि भारत में शिक्षक और विद्यार्थी दोनों भारतीय होते हैं परंतु शिक्षा का माध्यम एक विदेशी भाषा है। इस प्रकार हम अपने हाथों से बच्चों की बड़ी भारी शक्ति गँवाते हैं। आपने दूसरा प्रस्ताव उपस्थित किया कि सम्मेलन की सम्मति में आर्य स्कूलों के प्रबन्धकर्त्ताओं को अपने स्कूलों में प्रथम श्रेणी से हिन्दी की शिक्षा देनी चाहिए। प्रो० दीवानचन्द शर्म्मा ने प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा कि यह भारत में ही अनोखी बात देखी है कि मातृभाषा को माध्यम बनाने के लिए प्रस्ताव पास करने पड़ते हैं। कुछ महापुरुषों को छोड़

कर स्कूल और कालेजों की फ़ैक्टरियों से जो बी० ए० और एम० ए० के सिक्के निकलते हैं वे सब जाली होते हैं। वह शिक्षा ही क्या है जो अपनी भाषा में न हो? यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ।

श्री प्रधान जी ने तीसरा प्रस्ताव उपस्थित किया कि जीवन को उच्च बनाने के लिए आर्य स्कूलों और कालेजों में धर्म-शिक्षा अनिवार्य कर दी जाय और अध्यापकों को भी धर्म-शिक्षा की ट्रेनिङ्ग दी जाय। यह प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ।

६. ब्रह्मचर्य सम्मेलन

शनिवार, ११ एप्रिल प्रातः ८-४५ से ११ तक श्री विनोबा, संचालक, वर्धा आश्रम के सभानेतृत्व में ब्रह्मचर्य सम्मेलन हुआ। सभापति महोदय ने कहा कि हिन्दू धर्म में यह विशेषता है कि इसमें 'ब्रह्मचर्य' का शब्द है। जिस प्रकार हिन्दू धर्म में ब्रह्मचर्य पर विचार और आचरण होता है वैसा दूसरे धर्मों में नहीं होता। ब्रह्मचर्य की कल्पना बड़ी विशाल है। केवल इन्द्रिय-निग्रह ही ब्रह्मचर्य की कल्पना नहीं है। देह से बाहर की कल्पना ढूँढना भी आवश्यक है। असमर्थों की सेवा और सहायता करना ब्रह्मचारी के लिए एक विशाल कल्पना है। ब्रह्मचारी जब दूध पियेगा वा भोजन खायगा तो उसे भूखे और प्यासे स्मरण आ जायँगे। इस भाँति वह दूध और भोजन भी संयम से सेवन करेगा। ब्रह्मचर्य धारण करने के लिए एक आदर्श सामने रखना चाहिए। ऋषियों ने हमारे सामने आदर्श रखा है कि वेदों का अध्ययन करो। इस से ब्रह्मचर्य आसान और आनन्द-दायक हो जाता है। इस के लिए परिश्रम करना पड़ता है, परन्तु परिश्रम में भी आनन्द आता है।

इसके पश्चात् डा० भगवान्दास एम०एल० ए० ने वक्तृता देते हुए बतलाया कि ब्रह्मचर्य के कई अर्थ हैं। एक अर्थ तो यह है कि जो वेद का अर्थ करता हो वह ब्रह्मचारी है। परमात्मा ब्रह्म है, इसका बोधक शास्त्र वेद भी ब्रह्म है। बाल-विवाह का रोकना भी ब्रह्मचर्य है। ३६ वर्ष की अवस्था तक गुरुकुल में रहना चाहिए क्योंकि तब तक ही शरीर और बुद्धि परिपक्व होती है। प्राचीन समय में लोग ५० वर्ष की आयु के पश्चात् अपना व्यवसाय छोड़ कर जंगलों में चले जाते थे। इस प्रकार बेकारी का प्रश्न भी स्वयमेव हल हो जाता था। ये वयो-वृद्ध लोग नवयुवकों को अपनी बहु-मूल्य अनुमति भी देते रहते थे। नगर के बाहर वानप्रस्थियों के गढ़ होते थे। गृहस्थों के बालक इनसे मुफ्त शिक्षा ग्रहण किया करते थे। ब्रह्म देश के अन्दर अब भी वानप्रस्थ की झलक दिखाई देती है।

प्राचीन समय में चार आश्रम होते थे। ब्रह्मचर्याश्रम में त्याग और तप से अपने आपको भोग के लिये तैयार करना होता था। गृहस्थ का प्रयोजन सन्तानोपत्ति होता था।

माता त्याग और सेवा का पाठ और पिता प्रवृत्ति के आश्रम में निवृत्ति का पाठ पढ़ता है। वानप्रस्थी जाति के बच्चों की सेवा करता है। संन्यास में वह संसार के बच्चों को अपने बच्चे समझता है। वह संसार की सेवा का व्रत धारण करता है।

तत्पश्चात् स्वामी व्रतानन्द ने कहा कि ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए जो कष्ट हमें होते हैं वे विन्दु के तुल्य हैं परन्तु इससे जो सुख होता है वह समुद्र के समान है। ब्रह्मचर्य के पालन के लिये विचार और भोजन दोनों उत्तम होने चाहिए। नाटक और अश्लील गीत मनुष्य पर विष का-सा बुरा प्रभाव डालते हैं। बाल्य काल से ही बच्चों को "ओ३म्" के जप का अभ्यास करवाना चाहिये। मन की पवित्रता ब्रह्मचर्य धारण करने के लिये आवश्यक है।

तदनन्तर ब्रह्मचारियों ने ब्रह्मचर्य सम्बन्धी भजन गाकर सुनाए।

फिर डा० आर्यन (मद्रासी) ने अंग्रेज़ी में वक्तृता दी कि जीवन को उत्तम बनाने के लिये ब्रह्मचर्य का धारण करना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य का अर्थ जीवन के सब पहलुओं में अच्छा रहना है। महात्मा गान्धी, जो संसार के सब से बड़े व्यक्ति हैं, वह वास्तविक ब्रह्मचारी हैं। अमरीका से पधारनेवाली ललनाएँ ब्रह्मचर्य का अर्थ सन्तान निरोध समझती हैं। वस्तुतः जो लोग ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते वह अपने आपको विषयों का दास बनाते हैं।

तत्पश्चात् पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति ने जनता को सम्बोधित करके कहा कि आप अखण्ड ब्रह्मचारी दयानन्द के शिष्य हैं। जिस काम को त्रिशूलधारी महादेव भी नहीं जीत सके थे उस काम के पैने बाण दयानन्द के अखण्ड ब्रह्मचर्य की शिला पर पड़कर कुण्ठित हो गये थे। उस ऋषि के शिष्यों को मैं ब्रह्मचर्य की क्या महिमा समझाऊँ? एक शब्द में मैं कहना चाहता हूँ कि दीपक में जो स्थान तेल का है वही स्थान हमारे जीवन में वीर्य का है। ज्यों-ज्यों तेल कम होता जाता है दीपक की ज्योति भी त्यों-त्यों कम होती जाती है। ज्यों-ज्यों तेल उसमें बढ़ता है त्यों-त्यों उसकी ज्योति भी अधिक होती जाती है। तेल से भरा होने पर दीपक अपनी पूर्ण प्रभा से चमकता है। तेल सर्वथा न रहने से दीपक बिल्कुल बुझ जाता है। इसी भाँति ज्यों-ज्यों हम अपने शरीर में वीर्य का संचय करते जायेंगे त्यों-त्यों हमारी जीवन-ज्योति भी अधिक बढ़ती जायेगी। वीर्य का पूर्ण संचय होने पर हमारी जीवन-ज्योति पूर्णरूप से चमकेगी और ज्यों-ज्यों हम वीर्य नष्ट करते जायेंगे त्यों-त्यों हमारी जीवन-ज्योति मन्द पड़ जायेगी। सर्वथा वीर्य नष्ट होने पर हम मर जायेंगे। हमारे लिये उचित है कि उस ऋषि का अनुकरण करें। आजकल लोग कानों द्वारा गन्दे रैकार्ड सुनते हैं, नेत्रों से गन्दे दृश्यों को देखने के उत्सुक रहते हैं। दर्जनों सिनेमा और थियेटर खुल रहे हैं। ये चीजें युवक-युवतियों के ब्रह्मचर्य व्रत के भंग के बड़े भारी कारणों में से हैं।

इसके अनन्तर पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी ने वक्तृता देते हुए कहा कि ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध संपूर्ण जीवन से है। स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार मल-बद्ध से वीर्य का नाश होता है। मल-बद्ध के हट जाने से ७५% वीर्य शुद्ध रहता है। मल-बद्धता को दूर करने के लिये शीर्षासन बहुत लाभप्रद है। शारीरिक मल के त्याग के साथ-साथ हमें मानसिक और सामाजिक मल को भी दूर करना चाहिये।

श्री सभापति जी की संक्षिप्त वक्तृता के पश्चात् सम्मेलन समाप्त हुआ।

७. आर्य वृद्ध सम्मेलन

आदित्यवार, १२ एप्रिल प्रातः १० से ११ तक ला० रामकृष्ण, भूत-पूर्व प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सभापतित्व में आर्य वृद्ध सम्मेलन हुआ। सभा-मन्त्री पं० भीमसेन विद्यालंकार और सभा-प्रधान आचार्य रामदेव द्वारा श्रीयुत ला० रामकृष्ण की सेवा में समर्पित अभिनन्दन पत्र पढ़ा गया जो निम्न प्रकार से है—

अभिनन्दन पत्र

सेवा में—

श्रीयुत ला० रामकृष्ण जी भूत-पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
तथा प्रधान आर्य वृद्ध सम्मेलन

श्रीयुत मान्यवर प्रधान जी, सादर नमस्कार !

परमात्मा की कृपा और आप वृद्ध पुरुषों के आशीर्वाद से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब अर्द्ध-शताब्दी समारोह मना रही है। यहसमारोह पंजाब में आर्यसमाज के आन्दोलन की सफलता का जीता-जागता स्मारक है। हमारा सौभाग्य है कि हमें इस समारोह पर आपकी सेवा में श्रद्धाञ्जलि भेंट करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

गत पचास वर्षों में कई बार सभा का वातावरण गृह-कलह और बाह्य-कलह की संघर्षमयी चिंगारियों से तपने लगा था। ऐसे अवसरों पर आपकी सात्विक नीति-कुशलता ने ही आर्य जनता के अधिकारों की रक्षा की। बड़े-बड़े तार्किकों की पैनै तर्कों की तीव्रता तथा कर्मवीर कार्यकर्त्ताओं की क्रिया-शीलता की गर्मी आपकी गम्भीरता तथा शान्तिमयी प्रवृत्ति के सामने शान्त हो जाती थी।

पूज्य पितामह ! आज भी हम लोग आपके व्यक्तित्व की छाया में उन्नित-पथ पर अग्रसर होने का यत्न कर रहे हैं। सभा का पचास वर्ष का इतिहास आपके जीवन की आपबीती और आँखों देखी बात है। जिस प्रकार भीष्म पितामह ने कार्यक्षेत्र से निवृत्त होते हुए अपने आनेवाले उत्तराधिकारियों को जीवन संचारी उपदेश दिया था इसी प्रकार आज हम आपके अनुभव-पूर्ण वचनों को सुनने के लिये उत्सुक हैं।

पूज्यवर ! आपने आर्यसामाजिक जगत् में संगठन का मान करने की प्रवृत्ति को दृढ़ करके आर्य जनता के अधिकारों की रक्षा कर उसे सुरक्षित पथ का यात्री बनाया है। आर्यसमाज इस संगठन बल के सहारे स्वतन्त्र रूप से दिन-प्रति-दिन उन्नति पथ पर अग्रसर हो रहा है।

आज इस शुभ अवसर पर हम आप से आशीर्वाद की याचना करते हैं और परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह हमें सात्विक नीति, नैतिक साहस, धर्म-निष्ठा तथा कर्त्तव्य पर चलने की निर्भयता प्रदान करे।

आपके आशीर्वाद व वात्सल्य-पात्र

भीमसेन
सभा-मन्त्री

रामदेव
सभा-प्रधान

१२ एप्रिल १९३६

श्री प्रधान जी के वृद्ध होने के कारण उनका निम्न अभिभाषण ला० ज्ञानचन्द ने पढ़ा।

आपने मुझे इस सम्मेलन के सभापति पद को ग्रहण करने की आज्ञा दी है। इस आज्ञा का बन्धा हुआ मैं आज यहाँ उपस्थित हूँ। मैंने अपनी ७८ वर्ष की आयु के अन्दर वेदी पर से बोलने का कभी कोई विशेष साहस नहीं किया। इसलिये मैं जानता हूँ कि मैं इस पदवी के कार्य को भली भाँति निबाहने के असमर्थ हूँ। परन्तु मैंने आर्यसमाज का एक तुच्छ सेवक होते हुए अपनी आयु में सभा की आज्ञा पालन करने का पाठ भी भली प्रकार सीखा है। इसी के अनुसार मैं आप सज्जनों की आज्ञा पालन करने से चूक नहीं सकता। सो मैं आपका बहुत धन्यवाद करता हूँ कि आपने यह पद मुझे दिया है। सज्जनगण ! मुझे आज हर्ष होता है और अति हर्ष होता है, केवल इसलिये नहीं कि आपको और मुझे यहाँ पर पंजाब आर्यसमाज के जीवन के एक विशेष अवसर पर इकट्ठे होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, बल्कि अधिकतर इसलिये कि आपको और मुझे अब यहाँ पर कई दिनों से इस महान् यज्ञ और प्रान्त-भर के और अन्य स्थानों के आर्य सज्जनों से महान् समागम करने का और कल के लम्बे हर्ष-जनक जलूस का दृश्य देखने का अवसर मिला। यह समागम और यह आर्यों के खुले हुए प्रेम और श्रद्धा का मनोरञ्जक दृश्य श्री मुनिवर स्वामी दयानन्द जी सरस्वती महाराज के बोये हुए बीज और आप में बहुत सज्जनों के रक्त से सींचे हुए पौदे का फल है।

मुझे १८७७ में श्री स्वामी जी के दर्शन हुए तब से मैं आर्यसमाज रूपी वृक्ष की छाया से लाभ उठा रहा हूँ। यहाँ पर कौन वृद्ध है जो आज यह देखकर गद्गद् प्रसन्न नहीं हो रहा कि वही आर्यसमाज का पौदा जिसकी नन्हीं-नन्हीं कोंपलों को उसने या उसके साथियों ने कई प्रतिकूल ऋतुओं से और नाना प्रकार के आक्रमणों से सुरक्षित करने में कुछ हाथ बटाया था

और जिसे निराशावादी इन दिनों कुछ कुम्हलाया हुआ समझते हैं वही आर्यसमाज वास्तव में आज बढ़ के एक विशाल वृक्ष का रूप धारण किये हुए है जिसकी छाया में बच्चे, जवान, बूढ़े, स्त्री, पुरुष, ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्यासी और हर जाति और श्रेणी के सज्जन अपने जीवनों को शुद्ध और सफल बना रहे हैं। अर्द्ध-शताब्दी उत्सव का दृश्य जहाँ आप और मेरे लिये इसलिये हर्ष और महान् हर्ष का कारण है कि यह दृश्य हमने अपनी आँखों से देख लिया है, वहाँ यह इन स्वाभाविक निराशावादियों के मनोवेधक भावों का भी ऐसा बल-पूर्ण उत्तर है जिससे बढ़कर अन्य कोई उत्तर उनको देने की आवश्यकता नहीं।

सज्जनो ! कौन नहीं जानता कि पर्वत की निकली हुई जल से नन्हीं-सी धारा जो शीतल जल से विशाल देश के संतप्त हृदय को शान्त करना चाहती है उसे मैदानों की गम्भीर वृत्ति तक पहुँचने से पहले बेशुमार चट्टानों से टकराना पड़ना है। चट्टानों से लड़ाई करते समय इस धारा से इतना शोर होता है कि दूर-दूर तक सुनाई देता है। परन्तु जब इन पर्वतों और चट्टानों को अबूर करके वही धारा विशाल मैदानों को सैराब करती हुई एक महान् नदी के रूप में प्रगट होती है तो इसमें न वह क्रोध रहता है और न वह शोर। परन्तु कौन ऐसा है जो कह देगा कि इस महान् नदी में जान नहीं या वह सूख गई हैं। ठीक यही अवस्था आर्यसमाज की है। आर्यसमाज की कार्य-पद्धति के प्रारम्भिक समय में सैकड़ों बाधाएँ आईं। "स्त्री-शिक्षा", "अछूतोद्धार" और "गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली" आदि प्रत्येक कार्य में आर्यसमाज की धारा को मुक़ाबला की चट्टानों से टक्कर खानी पड़ीं जिस टक्कर का शोर दूर-दूर बैठे हुए लोग सुनते रहे। आज देश में कोई जाति नहीं, किसी धर्म के अनुयायी नहीं जो स्त्रियों को शिक्षा देना अपना परम कर्त्तव्य न समझते हों। "अछूतोद्धार" को तो देश की मुख्य सभा कांग्रेस ने अपना मुख्य कार्य ही बना लिया है। इसी प्रकार अन्य कार्यों में भी बाधाओं की चट्टानें इसी चली हुई धारा के मुक़ाबिला की ताब न लाती हुई पिस कर चूर हो गई हैं और इस प्रवाह के साथ रेत बन कर इस महान् नदी की तह में मैदानों तक ही जाती हैं। अब शोर हो तो किस टक्कर से पैदा हो ?

परन्तु हाँ मेरे कथन का यह सार न समझना चाहिये कि आर्यसमाज अब अपना काम कर चुका और इसको अब कुछ करना बाक़ी नहीं रहा। विरुद्ध इसके तो मेरा यह विचार है कि आर्यसमाज अभी एक विशाल नदी के रूप में प्रकट हुआ है। अब ही तो समय है कि वह जगत् को शीतलता और शान्ति प्रदान करे और जिस कार्य के वास्ते इस सोम-धारा ने पर्वत की अन्धकारमय कन्दिरा में जन्म लिया था उस कार्य को यह पूरा कर सके। इस नदी के दोनों किनारों की पृथिवी ने तो इसके जल से लाभ ले ही लिया है। परन्तु दूर-दूर दोनों तरफ़ अभी बहुत खेत पड़े हैं जो इसके जल के प्यासे हैं। यह कठिन कार्य आजकल के युवकों के

हाथ में है और मुझे पूर्ण विश्वास है कि आर्यसमाज के वह युवक इस कार्य को ऐसी भली प्रकार से करेंगे कि भविष्य में नदी के किनारों से हज़ारों कोस की दूरी तक भी इस नदी के पानी से सिंचे हुए और लहलहाते हुए खेत पाएँगे।

परन्तु इस महान् कार्य में आपका और हमारा भी एक कर्त्तव्य है और मेरे तुच्छ विचार में वह यह है कि वृद्ध पुरुषों और वृद्ध स्त्रियों ने आर्यसमाज के अन्दर अपने-अपने जीवन में जो लाभकारी अनुभव किये हैं उनको अपने प्रेम और मिलाप से युवकों तक पहुँचावें। निस्सन्देह ऐसे युवक और युवतियाँ बहुत होंगी जो स्वयं ऐसे अनुभवों में कहीं पहुँच चुके होंगे। परन्तु ऐसे भी बहुत होंगे जिनको आप से लाभ होगा। मैं समझता हूँ कि सब से प्रथम स्थान आर्यसमाज के सिद्धान्तों को जानने और समझने और श्री स्वामी दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन को दिया जाना चाहिये। यदि आप में प्रत्येक नर-नारी अपने जीवन के शेष भाग का यह एक कार्य बना ले कि युवकों में आर्यसमाज के सिद्धान्तों में रुचि और प्रेम पैदा करना है तो निश्चय से उस कल्प वृक्ष की शाखाएँ अधिकतर फल सकती हैं। आप में से कई वृद्ध सज्जनों को याद होगा कि आर्यसमाज के आरम्भ काल में प्रायः छोटी-छोटी सभाएँ बहुत स्थानों में होती रही हैं जिनमें वैदिक धर्मावलम्बी आपस में मिलकर धर्म सम्बन्धी शंकाओं को परस्पर वाद-विवाद से निवारण किया करते थे। इस प्रथा से जहाँ सत्य धर्म में अपना विश्वास दृढ़ होता था वहाँ अन्य पुरुषों के आर्यसमाज सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर देने और उनको धर्म का गौरव जतलाने की शक्ति भी उत्पन्न हो जाती थी। मेरा विश्वास है कि इस प्रकार की कोई प्रथा यदि फिर चलाई जाय तो धर्म पुस्तकों के अध्ययन का शौक बढ़ जाने और आर्यसमाज का प्रभाव पड़ जाने की बहुत आशा हो सकती है।

आजकल जो युवकों के मनों से प्रायः प्रत्येक धर्म और मत की ओर से अरुचि पैदा होने के समाचार कानों में पड़ते हैं। उस अरुचि को रोकने और उसके स्थान में परमात्मा और धर्म विषयक बातों में प्रेम पैदा करने का काम भी आप लोग ही भली प्रकार कर सकते हैं। अपने परिवारों में या अन्य अवसरों पर नवयुवकों को पथ-प्रदर्शन का काम वृद्ध लोग ही किया करते हैं। इसलिए यदि वह ही अपने इस काम को अपनी दिन-चर्या में अपने-अपने परिवारों में भली प्रकार निभाते रहें तो कोई कारण दिखाई नहीं देता कि युवकों को धर्म और परमात्मा में प्रेम न हो।

ठीक यही बात कई स्थानों के आर्यसमाजी भाइयों के परस्पर झगड़ों और धड़ाबन्दी के सम्बन्ध में कही जा सकती है। मत-भेद हर समय व्यक्तियों में हो सकता है और रहा है। आप में से बहुतों ने आर्यसमाज के सारे जीवन की घटनाओं को देखा है और सामाजिक

और व्यक्तिगत आचार-व्यवहार के भिन्न-भिन्न पहलुओं को अनुभव किया है। आप इस बात में मेरे साथ सहमत होंगे कि समाज सम्बन्धी मत-भेद को व्यक्ति-भाव में ले आने से समाज के संघटन को भारी हानि होने की संभावना है। इस हानि से समाज को बचाने के लिए आप में से प्रत्येक का कर्त्तव्य होना चाहिए कि अपने-अपने स्थानिक आर्यसमाजों में अपने प्रभाव और माधुर्य से ऐसा वायुमण्डल पैदा करें कि जिससे किसी को समाज के प्रबन्ध संबंधी कोई झगड़े में समाचार पत्रों या कचहरी में ले जाने का साहस न पड़े। किन्तु ऐसी सब बातें न केवल अन्तरंग सभा में निपट जायँ बल्कि व्यक्ति-भाव को संगठन के अधीन करने का तरीका पुष्ट हो। इसमें प्रत्येक जाति का कल्याण है। जो जाति जीवित रह कर संसार में अपना कार्य करना चाहती है उसे संगठन के गौरव को पूरी तरह समझना व मानना चाहिए। मुझे हर्ष है कि आर्यसमाज इस गौरव को ठीक समझता है, परन्तु संगठन की पुष्टि के लिए इसे हर समय चेतावनी दिलाना भी अत्यावश्यक है।

सज्जनगण! जैसा मैं पहले ही कह चुका हूँ मैं वेदी पर से बोलने का साहस नहीं किया करता। परन्तु अधिकारी-गण की आज्ञानुसार मैंने कुछ बिखरे हुए भाव टूटे-फूटे शब्दों में आपके सामने रखे हैं। आप लोग विचारशील हैं और मुझे निश्चय है कि आप सम्मेलन में ऐसे निश्चय करेंगे जिससे आपके प्यारे आर्यसमाज को उत्तम लाभ होगा।

परम पिता परमात्मा हम सब को शक्ति और प्रेम प्रदान करें जिससे हम सब अपने जीवनों के शेष समय को प्रभु-प्रेम और वैदिक धर्म की सेवा में लगा सकें।

तदनन्तर ला० केदारनाथ भूत-पूर्व मन्त्री आर्यसमाज ने कहा कि मैं १८८३ से आर्यसमाज लुधियाना में प्रविष्ट हुआ और उस समय से इसके झण्डे तले आश्रय लेता रहा। मैंने अपने अनुभव में यह मालूम किया है कि जब तक हमारे साथ हमारी स्त्रियाँ सहमत न हों हमारी सफलता जीवन के किसी क्षेत्र में नहीं हो सकती। वेद सारी दुनिया के लिए है। मैंने ऋग्वेद और सामवेद पढ़े हैं। इनमें हर स्थान पर मनुष्य-मात्र लिखा हैं। पहले वेद पढ़ना बहुत कठिन था परंतु अब आर्यसमाज की कृपा से वेद पढ़ना बहुत आसान हो गया है। वेद हर मनुष्य के लिए है और हरेक को घर में वेदों का पाठ करना चाहिए। अब तो छोटी-छोटी लड़कियाँ भी वेद-मन्त्र अच्छी तरह पढ़ती हैं। वेद का पढ़ना हरेक के लिए आवश्यक है।

इसके पश्चात् ला० लब्भूराम नय्यड़ (लुधियाना) ने वक्तृता देते हुए बतलाया कि मेरी आयु लगभग ६९ वर्ष है। जब मैं बारह-तेरह साल का था मुंशी कन्हैयालाल अलखधारी की प्रेरणा पर महर्षि दयानन्द महाराज लुधियाना पधारे और मुंशी जी के मित्र ला० जेठमल खजानची के मकान पर स्वामी जी के उपदेश होते थे। मेरे पिता जी की दुकान के सामने

ख़ज़ानची जी के मकान पर मैं भी गया और उनकी बग़ीची से कुछ फूल और पोदीना लेकर स्वामी जी के चरणों में रखे और मैंने स्वामी जी से कहा कि मुझे भी आर्यकुमार बनाओ। स्वामी जी ने मुझे थपकी देकर फ़रमाया कि तुम स्वयं आर्यकुमार हो। मैं उस समय बालक था। आर्यसमाज और आर्यकुमार में भेद नहीं समझता था। स्वयं शब्द का अर्थ भी नहीं समझता था। स्वामी जी ने मेरे माँगने पर एक पुस्तक दी जिसको लेकर बाज़ार में उछलता-कूदता कहता फिरा कि मैं भी आर्यकुमार बन गया। १८८२ ई० में लुधियाना में आर्यसमाज स्थापित हुआ। मैं भी प्रायः समाज में जाता रहा। १८८२ ई० में मेरे छोटे भाई का देहान्त हो गया। इससे दिल पर ऐसी चोट लगी कि बहुत विह्वल हो गया। इस विचार में कुछ नियम बनाए। ईश्वर की कृपा से अब तक इन नियमों पर दृढ़ हूँ। १ जनवरी १८८६ को श्री ला० रामजीदास ख़ज़ानची की कृपा से आर्यसमाज लुधियाना का सदस्य बन गया। जब आठ-नौ वर्ष की आयु में हमारे असल घर नूरमहल में मेरा यज्ञोपवीत संस्कार हुआ तो मृग-छाला पहने हुए जब दरवाज़ा के बाहिर जाने लगा तो बहिन जी ने रोका कि काशी नहीं जाना यहाँ पर पढ़ा लेंगे। यह इनका कहना खटकता रहा। रात को पुरोहित जी से पूछा—क्या बात है? उन्होंने फ़रमाया कि पहले गुरुकुल होते थे जहाँ लड़के पढ़ा करते थे। अब वह नहीं हैं इसलिए ऐसा किया जाता है। श्री महात्मा मुंशीराम की मेरे पर बहुत कृपा थी। जब उन्होंने गुरुकुल खोला तो इनकी कृपा से गुरुकुल सेवा में लग गया और अब तक सेवा पर दृढ़ हूँ। ईश्वर की कृपा से मैंने जो अपनी जीवनी का प्रोग्राम बनाया था वह इस समय तक पूरा होता जा रहा है। यह सब कृपा महर्षि स्वामी जी और पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द महाराज की है।

फिर श्री दीवान रत्नचन्द हडाली निवासी ने जो ८० वर्ष की आयु के थे वक्तृता देते हुए कहा कि मैंने काशी में स्वामी दयानन्द का दर्शन किया। इस बात को ५६ वर्ष हो चुके हैं। जब मैंने इन्हें पहली बार देखा तो आध घण्टा तक इनकी मूर्त्ति को देखकर आश्चर्य होता रहा। मैं लगातार २२ दिन तक इनकी सेवा में रहा और एक घण्टा रोज़ इनके साथ मुबाहिसा करता। इस तरह मेरे बहुत-से सन्देह दूर हो गये। स्वामी जी के पास मौलवी व अंग्रेज़ बड़े-बड़े विद्वान् आते और स्वामी जी सबके सन्देह दूर करते।

ला० चिरञ्जीतलाल श्रीनगर निवासी ने वक्तृता देते हुए कहा कि मुझे याद है कि स्वामी दयानन्द ने वायसराय-हिन्द व लार्ड लिटन से मुलाकात की थी। वायसराय ने स्वामी जी से कहा कि आपको प्रचार आदि के काम में तकलीफ़ तो नहीं हुई। स्वामी जी ने कहा ब्रिटिश राज्य में यह तकलीफ़ नहीं। वायसराय ने कहा तो इतना कह दीजिये कि ब्रिटिश राज्य अच्छा है। स्वामी जी ने कहा—यह मेरे सिद्धान्त के विरुद्ध है। यदि

हिन्दुस्तान के लिए कोई स्वराज्य बेहतर हो सकता है तो वह आर्य स्वराज्य है। इसके अतिरिक्त दो-तीन अन्य भद्र पुरुषों की वक्तृताओं के पश्चात् आर्य वृद्ध सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त हुई।

८. आर्य भाषा सम्मेलन

आदित्यवार, १२ एप्रिल मध्याह्नोत्तर १॥ से ३ तक मुंशी प्रेमचन्द के सभापतित्व में आर्य भाषा सम्मेलन हुआ। श्री सभापति महोदय ने वक्तृता देते हुए कहा कि स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार और खान-पान के छूत-छात को दूर करने का गर्व आर्यसमाज को ही प्राप्त है। आर्यसमाज ने गुरुकुल को जन्म देकर वास्तविक शिक्षा के प्रचार करने का यत्न किया है। यदि विद्या हममें सेवा-भाव न लाये और जुरत पैदा न करे तो इस विद्या से अविद्या ही अच्छी है। गुरुकुलों में हिन्दी-भाषा को माध्यम बना कर आर्यसमाज ने एक उदाहरण उपस्थित कर दिया है। आजकल हिन्दी भाषा और उर्दू भाषा में जो तमीज़ हो रही है उसका कारण यह है कि उर्दू भाषावाले अरबी और फ़ारसी के शब्दों से उर्दू भाषा को कठिन बनाते जाते हैं।

तदनन्तर श्रीमती दमयन्ती कुमारी विद्यालंकृता ने बतलाया कि हिन्दी-साहित्य में मुंशी प्रेमचन्द के आने से इसकी अवस्था बहुत अच्छी हो गई है। स्नातिका जी ने बतलाया कि पंजाब आर्यों का केन्द्र है और यही भारतवर्ष का गुरु था। हिन्दी का यहीं जन्म हुआ और हिन्दी-साहित्य का जन्मदाता लाहौर में पैदा हुआ। परन्तु मुसलमानों के राज्य में हिन्दी को विगतदृष्टि-सा कर दिया गया। गुरु नानकदेव ने पंजाब में जन्म लिया और पंजाबी कविता कही जिसमें अधिकांश हिन्दी है। फिर कुछ समय पश्चात् महर्षि दयानन्द ने देश का उत्थान किया। उन्होंने प्रचार, शास्त्रार्थ और अपनी रचनाएँ हिन्दी में ही कीं। पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द और स्वामी सत्यदेव आदि कई आर्य नेताओं ने हिन्दी को ऊँचा करने की कोशिश की। हिन्दी के प्रचार में डी० ए० वी० कालेज और गुरुकुल काँगड़ी के बहुत अच्छा काम किया है।

इस सम्मेलन में निम्न प्रस्ताव स्वीकार हुए—

(१) तमाम आर्य स्कूलों में पहली श्रेणी से शिक्षा का माध्यम हिन्दी को ही रखा जाय।

(२) महकमा रेलवे से दरख़्वास्त की जाय कि अपने महकमा में उर्दू और अंग्रेजी की तरह हिन्दी को भी जगह दें।

(३) बच्चों को स्कूल भेजने से पहले ही माता-पिता हिन्दी की शिक्षा दें।

(४) निजी पत्र-व्यवहार में हिन्दी का प्रयोग करना चाहिये।

सभापति महोदय ने अन्त में वक्तृता दी कि आप लोग अपने अधिकारों को खुद नहीं समझते तो दूसरे आपके अधिकारों को क्यों पहचानें। आप स्वराज्य माँगते हैं, परन्तु आपके घर में संस्थाओं आदि में स्वराज्य नहीं है? देश का स्वराज्य किस प्रकार हो? बच्चों की शिक्षा का आधार माता है। माताओं को चाहिये कि बच्चों को शुरू से ही हिन्दी की शिक्षा दें और स्वतन्त्र होने की शिक्षा दें। इसके पश्चात् आर्य भाषा सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त हुई।

९. महिला सम्मेलन

सोमवार, १३ एप्रिल प्रातः ८॥ से ११ तक महिला सम्मेलन हुआ। इसकी सभानेत्री श्रीमती विद्यावती सेठ, बी० ए०, आचार्या, कन्या गुरुकुल, देहरादून थीं। श्रीमती पूर्णदेवी ने अपना स्वागत अभिभाषण पढ़ा। इसके अनन्तर आचार्या जी ने अपना निम्न अभिभाषण पढ़ा।

बहिनो और माताओ,

आपने मुझे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के इस अर्द्ध-शताब्दी महोत्सव पर रचे गये महिला-मम्मेलन की सभानेत्री बना कर जो सम्मान प्रदर्शित किया है इसके लिये मैं आपका हृदय से धन्यवाद करती हूँ।

बहिनो! कोई समय था जब कि हम देवता, गृहलक्ष्मी और प्रभु की सृष्टि में संसार की श्रेष्ठतम विभूति समझी जाती थीं, किन्तु आज उसी अभागी नारी जाति के दुःखों की आग भारत क्या समस्त भूमण्डल के गृहों को विध्वंस कर रही हैं, चारों ओर से उसके बचाने के उपाय किये जा रहे हैं, पर लोग यह निश्चय नहीं कर पाये कि उस आग को बुझाने के लिये क्या उपाय करना चाहिए? दूर जाने की आवश्यकता नहीं, आपने भी पढ़ा होगा अभी हाल ही में गत ३० जनवरी को कलकत्ता-टाउन हाल में अन्तर्राष्ट्रीय महिला सभा तथा भारत-राष्ट्रीय महिला सभा का सम्मिलित अधिवेशन हुआ था। अन्तर्राष्ट्रीय महिला सभा की स्थापना १८८८ ई० में अमेरिका में हुई थी। इसका उद्देश्य है कि भिन्न-भिन्न देशों के महिला आन्दोलनों में सामंजस्य पैदा करके और उन्हें सहायता पहुँचा कर स्त्रियों की स्थिति में सुधार करना और उन्हें सामाजिक उन्नति की ओर बढ़ाना। कहा जाता है कि यह संस्था भिन्न-भिन्न देशों की महिला सभाओं का एक संघ है, जिसमें संसार की सभी जातियों की और सभी धर्मों की स्त्रियाँ अपने अलग अदर्शों के अनुसार चलती हुई जीवन में तथा विचारों में अत्यधिक विभिन्नता रखती हुई भी आपस में मिल कर काम करती हैं। इस सभा का आरम्भ एक छोटे से दल से हुआ था, परन्तु इसका प्रभाव और शक्ति दिन-प्रति-दिन बढ़ती गई, यहाँ तक कि

अब इस संघ से चालीस विभिन्न देशों की राष्ट्रीय महिला सभाएँ सम्बन्धित हैं, प्रत्येक राष्ट्रीय सभा की अनेक शाखाएँ हैं, और राष्ट्रीय समितियाँ हैं, प्रत्येक शाखा और समिति से अनेक स्थानीय महिला-संस्थाएँ संबद्ध हैं, इस प्रकार यह अन्तर्राष्ट्रीय महिला सभा संसार की ४०,०००,००० महिलाओं की प्रतिनिधि है। प्रत्येक पाँच वर्ष बाद इस सभा का पंचवर्षीय अधिवेशन हुआ करता है, जिसमें महिलाओं से सम्बन्ध रखनेवाली विभिन्न बातों में जो-जो उन्नति हुई हो और जो-जो परिणाम निकले हों उनकी विस्तृत रिपोर्ट उपस्थित की जाती है, तथा आगामी कार्यों का प्रोग्राम बनाया जाता है। अनेक महान् आदर्शों की प्राप्ति के लिए और सामाजिक उन्नति के लिए कार्य करनेवाली संस्थाएँ जो आज-कल संसार में चल रही हैं इसी अन्तर्राष्ट्रीय महिला सभा के पंचवर्षीय अधिवेशन की विवेचना का परिणाम हैं। भारत-राष्ट्रीय महिला सभा इस अन्तर्राष्ट्रीय महिला सभा से सम्बन्धित एक संस्था है, जिसकी सभा-नेत्री इस वर्ष महाराणी बड़ोदा थीं। इसके अन्तर्गत ६ प्रान्तीय सभाएँ हैं। इस प्रकार प्रत्येक देश की राष्ट्रीय महिला सभा से सम्बन्ध रखनेवाली देवियाँ अपनी-अपनी विशेष समस्याओं पर इस अन्तर्राष्ट्रीय सभा में विचार विनिमय कर उन्हें सुलझाने की चेष्टा करती हैं इस वर्ष इस सभा में ग्रामोद्धार, कन्याओं की शिक्षा, सामाजिक कार्यकर्त्रियों को ट्रेनिंग, बच्चों के स्कूल, सिनेमा, स्कूलों का डाक्टरी मुआयना, भोजन और स्वास्थ्य, स्त्रियों की क़ानूनी अक्षमताएँ, वोटाधिकार, मातृत्व में मृत्यु और स्त्रियों बच्चों के रोज़गार आदि विषयों पर विचार करके प्रस्ताव पास किये गये, जिन पर भारत-राष्ट्रीय महिला सभा काम करेगी। यह तो एक सभा का वर्णन है, इस प्रकार अनेकानेक यत्न हो रहे हैं, जिसका वर्णन इस छोटे से भाषण में करना असम्भव है। उन्नत कहलानेवाले देशों को छोड़ कर पराधीन भारत में भी बहुत कुछ कार्य किया जा रहा है। आर्यसमाज से बाहर देवियाँ चुपचाप नहीं बैठी हैं, किन्तु जैसा-जैसा जिस का आदर्श है उसी के अनुसार शिक्षा-दीक्षा लेकर वे नारी-संसार के प्रश्नों का हल सोच रही हैं और जो कुछ उनसे बन पढ़ता है सो करने का प्रयत्न कर रही हैं।

आजकल पूर्वीय और पश्चिमीय सभ्यता का संघर्ष चल रहा है। प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति का चित्र यदि देखना हो तो उसे सीता, सावित्री, गार्गी, मैत्रेयी, दुर्गावती, पद्मिनी, लक्ष्मीबाई, मीराबाई तथा माई भगवती आदि प्राचीन, अर्वाचीन और मध्य कालीन देवियों की जीवनियाँ बता रही हैं। इतिहास के केवल पत्र ही उलटने की देर है। किन्तु अर्वाचीन आदर्श क्या है? अर्वाचीन समाज-सुधारक भी चाहते हैं कि लड़कियाँ भी लड़कों की ही तरह शिक्षा ग्रहण करें, वही डिग्रियाँ लेकर उन्हीं के सदृश हो जायँ अर्थात् स्त्रियाँ पुरुषों के साथ स्वच्छन्द मिलें-जुलें, वे आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी रहें, दफ़्तरों व कारखानों में काम करें, वकालत व डाक्टरी करें, तथा समस्त व्यवसाय और व्यापारों में पुरुषों के समान कार्य करें, उन्हें

राजनीतिक अधिकार हों, वे पुरुषों की भाँति विवाह-सम्बन्ध-विच्छेद कर दूसरे पति से विवाह कर सकें, उन्हें निज सम्पत्ति रखने का अधिकार हो इत्यादि।

विद्वानों का कहना है कि स्त्री-पुरुष दोनों भिन्न-भिन्न हैं, उनके स्वभाव, उनकी शक्ति और उनकी कार्यक्षमता में विभिन्नता है। अतः उसी के अनुसार उनकी शिक्षा, उनके कार्य-क्षेत्र, उनके कर्त्तव्य और अधिकार भी भिन्न-भिन्न प्रकार के होने चाहियें। कुछ काम तो ऐसे हैं जिन्हें स्त्रियाँ ही कर सकती हैं और कुछ ऐसे हैं जिन्हें पुरुष ही कर सकते हैं। अपना-अपना कर्त्तव्य पालन करने के लिए स्त्री और पुरुष दोनों को ही, प्रकृति देवी की तरफ़ से नैसर्गिक अधिकार प्राप्त हैं। उदाहरणार्थ सन्तान पैदा करना और उसका भली प्रकार पालन-पोषण करना और शिक्षा का अधिकार केवल स्त्रियों को ही है। यह काम केवल स्त्रियाँ ही कर सकती हैं, पुरुष नहीं। परन्तु बहुत भारी भार उठाने का कार्य जिसमें अधिक शारीरिक बल की आवश्यकता है उसे पुरुष ही कर सकते हैं स्त्रियाँ नहीं।

हिटलर की गवर्नमेंट इस बात पर ज़ोर दे रही है कि जर्मनी के युवक-युवतियाँ अविवाहित न रहने पावें। विवाह करनेवाले नवयुवक और नवयुवतियों को सरकार ऋण देती है। जहाज़ी व्यापार सम्बन्धी कम्पनियों और इस्पात के कारखानों में काम करनेवाली देवियों को शादी के समय अच्छी रक़म पुरस्कार में दी जाती है। ३० वर्ष की जर्मन महिला को नौकरी से पृथक् कर दिया जाता है। इस बात पर ज़ोर दिया जाता है कि जिसका विवाह-क्षेत्र में मूल्य घट जाय उसकी क़दर अन्यत्र भी न हो। वहाँ अच्छी सन्तान पैदा करने पर पुरस्कार भी दिये जाते हैं। इस प्रकार देश में सुसन्तति उत्पत्ति के लिये और वीर बालकों की संख्या बढ़ाने के लिये विविध उपायों का प्रयोग किया जा रहा है, तथा देवियों को व्यावसायिक स्पर्द्धा से पृथक् रख कर देश और जाति को उन्नत सन्तान अर्पण करने की शुभ भावना में प्रवृत्त कराया जा रहा है।

हमारी आर्य प्रतिनिधि सभा के वर्तमान प्रधान श्री आचार्य रामदेव ने दिसम्बर १९३५ के "विशाल भारत" में "मेरी कथा के कुछ पृष्ठ" में एक स्थल पर राष्ट्रीय शिक्षा का वर्णन करते हुए लिखा है कि ऋषि दयानन्द ने अपने एक पत्र में लिखा है कि "साधारण स्कूल और कालेज खोलना आर्यसमाज का उद्देश्य सर्वथा नहीं है।" और आर्यसमाज बम्बई के नियमों में ऋषि ने स्पष्टतया लिखा है कि प्रत्येक आर्यसमाज के साथ "वेद-विद्यालय होने चाहिये एक पुत्रों का, दूसरा पुत्रियों का।" शिक्षा के क्षेत्र में ऋषि का बतलाया मार्ग बहुत स्पष्ट है। पुत्रों के संबंध में और कुछ वक्तव्य हो तो हो, परन्तु पुत्रियों के सम्बन्ध में आर्यसमाज ने अब तक कोई बड़ा शिक्षणालय तो चलाया ही नहीं। केवल जगह-जगह आर्य कन्या पाठशालाएँ ही हैं, जिससे न तो ऋषि दयानन्द का उद्देश्य पूरा होता है न सरकारी स्कूल-कालेज जैसा शिक्षण ही होता है। इसलिये प्रथम शिक्षा

के क्षेत्र में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का नया परीक्षण जो तेरह वर्षों से कन्या-गुरुकुल देहरादून के रूप में हो रहा है, और जिसमें शिक्षा-साधनों के बहुत त्रुटि-पूर्ण होते हुए भी सफलता के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं। उसकी पाठ्य-प्रणाली का प्रचार यदि सब ही आर्य पुत्री पाठशालाओं में किया जाय तो एक तो कन्याओं का मस्तिष्क उन्नत हो और दूसरे उनमें देश के प्रश्नों को समझने की शक्ति आवे, साथ ही राष्ट्रीयता के भाव भरें और सब से बढ़कर वह संस्कृत भाषा का उत्तम ज्ञान होने से वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों तथा गीता आदि का तत्व समझ कर जीवन का ध्येय प्राप्त कर सकें। आर्यसमाज के लिये यह कुछ बड़ी बात नहीं है केवल एक बार ध्यान खिंचने की बात हैं, यद्यपि ऐसा करने से कुछ कठिनाई सामने आवेगी तथापि लाभ अधिक होगा। जो आर्य पुत्री पाठशालाएँ ऐसी पाठविधि चला सकेंगी वही रहेंगी अन्य सब बन्द हो जावेंगी। जिन लोगों ने सरकारी पाठविधि के अनुसार पढ़ाना ही होगा उनके लिये भी प्रत्येक शहर में गर्लस् स्कूल बने ही हुए हैं। आर्यसमाज के धन, जन, समय और शक्ति का तो दुरुपयोग न होगा। इसके अतिरिक्त सुशिक्षा के प्रचार से आर्य देवियों में कार्यक्षमता, त्याग और तपस्या के भाव भी साथ ही साथ बढ़ते जायेंगे, इसीलिये आर्य महिला सम्मेलन को यदि एक नाटक ही न रख कर सचमुच एक लाभकारी संस्था बनाना है तो सबसे पहले शिक्षा में क्रान्ति उत्पन्न करना अपना ध्येय बनाना होगा।

दूसरी बात यह है कि बहिनों में पर्दा प्रथा हट रहा है। यह तो अच्छी बात है, परंतु हर एक सोसायटी में स्त्री-पुरुषों के परस्पर मिलने-जुलने के नियम हैं। लेकिन उत्तर भारत में जो नव-समाज अब बन रहा है उसमें कोई नियम नहीं है। हमारे यहाँ भी महाराष्ट्र आदि दक्षिण देशों में पर्दा नहीं है। स्त्रियाँ नंगे सिर भी रहती हैं परन्तु वह अपनी पुरानी मर्यादा के अन्दर रहती हैं। मर्यादा तो होनी ही चाहिये। इसलिये स्त्री-समाज विद्वानों और समाज शास्त्रियों से परामर्श करके समाज में स्त्री-पुरुषों के मिलने-जुलने के नियम बना कर उनका पालन करे ताकि पर्दे की हानि दूर करते-करते कहीं लज्जा और शील भी न खो बैठे।

तीसरी बात जो ध्यान देने योग्य है वह है वेश-भूषा। हमारी पंजाब की बहिनें जिस प्रकार सजधज कर हर जगह स्कूल-कालेजों, सभा-समाजों तथा सिनेमा आदि में उपस्थित होती हैं वह बहुत ही लज्जास्पद है। और पञ्जाब-जैसे पहिले सादगी के लिये मशहूर देश के लिये डूब मरनेवाली बात है। उन्हें इस पर विचार करना चाहिये।

चौथी बात जो ध्यान देने योग्य है वह यह है कि जितने हम ग़रीब होने जा रहे हैं उतने ही फ़िजूलखर्च भी होते जा रहे हैं। अमीर लोग भी इस अंश में पाप के भागी हैं क्योंकि वे उदाहरण रख कर दूसरों को लुभा देते हैं। पञ्जाब ने तो इस विषय में हद कर दी है। ग़रीब बनना कोई नहीं चाहता। अतः विवाह आदि कार्यों में जहेज़ तथा ज्याफ़त आदि में

अत्यधिक व्यय को घटाने का उपाय किया जाय। एक मर्यादा नियत हो जाय उसीका सब पालन करें। स्त्रियाँ ही प्रायः पुरुषों को इन बातों के लिये प्रेरित करती हैं शायद बाध्य भी करती हैं यह कहना भी अत्युक्ति न होगी। इसलिये यह स्त्रियों का ही कार्य है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब से प्रार्थना करके विद्वानों और विदुषी देवियों की एक उपसभा की योजना करावें जो इस सम्बन्ध में नियम बनावें और फिर सब आर्य-गण उसका पालन करें।

पाँचवीं बात जो आज विशेष ध्यान देने योग्य है वह यह है कि ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज में स्त्री पुरुष दोनों को सभासद बनने का अधिकार दिया है। धर्म-मन्दिर स्त्री और पुरुषों के अलग-अलग हों यह किसी भी धर्म में नहीं है, अतः स्थानीय आर्यसमाजों में, प्रांतीय प्रतिनिधि सभाओं में तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा में भी देवियों को बहुत संख्या में सभासद बन कर भाग लेना चहिये।

इस सम्मेलन में निम्न प्रस्ताव स्वीकृत हुए—

१. आर्यसमाज के बाहर स्त्रियों की कई सभाएँ हैं जो नियमित रूप से प्रति वर्ष भारत के किसी शहर में महिला सम्मेलन करके महिलाओं की समस्याओं पर विचार करके तदनुकूल कार्य करती हैं। पर हमारी आर्यसमाज की बहिनों की अब तक कोई सभा नहीं है जो नारी-सम्बन्धी समस्याओं पर प्रकाश डाल सके। पंजाब की अर्द्ध-शताब्दी पर होनेवाला महिला सम्मेलन आर्य बहिनों से अनुरोध करता है कि वह एक अपना संगठन बनाएँ जो महिला संबंधी भिन्न-भिन्न प्रश्नों की विवेचना करके उनके सुधार की व्यवस्था करे।

२. पंजाब की स्त्रियों में फ़ैशन बढ़ रहा है जिससे वे विदेशी बहुमूल्य किन्तु अनुपयोगी वस्त्रों का इस्तेमाल करती हैं। अतः यह सम्मेलन उनसे प्रार्थना करता है कि आज से खद्दर नहीं तो कम-से-कम स्वदेशी तो अवश्य पहनने का व्रत लें।

३. आर्यसमाज को पंजाब में कार्य करते हुए पचास वर्ष हो गए हैं परन्तु कन्या-पाठशालाओं की शिक्षा-पद्धति वैदिक सिद्धान्तों के सर्वथा प्रतिकूल और त्रुटिपूर्ण है। अतः ऋषि की शिक्षा-प्रणाली का अनुसरण करने के लिए उनमें परिवर्तन और परिवर्धन की आवश्यकता है।

४. चूँकि आजकल दो-दो और चार-चार बच्चोंवाली विधवाएँ विवाह करके विवाह की पवित्रता को कलंकित कर रही हैं अतः यह सम्मेलन विधवा-विवाह सहायक सभाओं, विधवाओं और विधवा-विवाह के पक्षपातियों से प्रार्थना करता है कि वे इस संबन्ध में विशेष नियम बनाएँ जिससे नन्हीं-नन्हीं अबोध विधवाओं का विवाह होकर उनकी स्थिति सुधरे, लेकिन बाल-बच्चोंवाली विधवाओं पर प्रतिबन्ध रहे जिससे कुल मर्यादा अक्षय बनी रहे।

५. पंजाब में जहेज़ की प्रथा बढ़ रही है। रोज़ अखबारात जहेज़ की माँग से भरे रहते हैं। यह सम्मेलन शिक्षित बहिनों से प्रार्थना करता है कि वह ऐसा करनेवालों के साथ असहयोग करें और जहेज़ का दिखलावा न करके जो कुछ देना हो चुपचाप दें।

६. पञ्जाब के स्कूलों और कालेजों में पढ़नेवाली बहिनें प्रायः सजधज कर पढ़ने जाती हैं जिनके दुष्परिणामों से आप अनभिज्ञ नहीं। यह सम्मेलन उन विद्यार्थी बहिनों से प्रार्थना करता है कि वे सादगी के साथ पढ़ने और सभा-समाजों में जाया करें।

७. सनातनी स्त्रियाँ अपने धार्मिक कृत्यों को बड़ी श्रद्धा भक्ति के साथ करती हैं परन्तु आर्यसमाजी बहिनें सन्ध्या, हवन, जप, तप और दान आदि किसी काम में श्रद्धा नहीं रखतीं। इसलिए यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि वे हवन और सन्ध्या का व्रत लें तथा अपने परिवार सहित प्रति दिन अग्निहोत्र और सन्ध्या अवश्य करें।

८. पढ़ी-लिखी स्त्रियों को चाहिए कि वे अपने मुहल्लों में एक ऐसी समिति बनाएँ जिस से वे अनपढ़ स्त्रियों को कुछ शिक्षा दे सकें और हवन आदि सिखा सकें।

९. यह सम्मेलन गृहस्थी स्त्रियों और भाइयों से प्रार्थना करता है कि वे अपने घरों में अग्निहोत्र के अतिरिक्त बलिवैश्वदेव यज्ञ, दर्श, पूर्णमास्येष्टि, नवशस्येष्टि यज्ञ आदि नियमित रूप से करके इनका प्रचार करें।

१०. जब से स्त्रियाँ मांस और अण्डे खाने लगी हैं तब से घर-घर में मांस और अण्डे आने लगे हैं। अतः यह सम्मेलन मांस खानेवाली बहिनों और माताओं से प्रार्थना करता है कि वे आसुरी भोजनों को छोड़कर सात्विक भोजन किया करें।

११. यह महिला सम्मेलन अपनी आर्य बहिनों से अनुरोध करता है कि स्त्री-जाति में संगीतकला, चित्रकला अर्थात् गृहकार्य दक्षता की ओर विशेष ध्यान दिया जाय जिससे स्त्रियों के स्वाभाविक गुण कला और निपुणता की ओर प्रत्येक आर्य बहिन का ध्यान आकर्षित हो।

१२. आजकल अछूतोद्धार आन्दोलन जोर पकड़ रहा है जिसमें स्त्रियों की सहायता के बिना सफलता का प्राप्त होना कठिन है। अतः सब बहिनों से प्रार्थना है कि छुआछूत तथा जात-पात का भेद-भाव छोड़कर देश की उन्नति में सहायक हों।

१३. यह सम्मेलन स्त्री-जाति से प्रार्थना करता है कि यदि एक पत्नी के होते हुए कोई मनुष्य दूसरा विवाह करे तो उस दम्पति का तथा लड़कीवालों का बहिष्कार किया जाय।

१०. व्यवसाय सम्मेलन

सोमवार, १३ एप्रिल, मध्याह्नोत्तर व्यवसाय सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। इस सम्मेलन के लिए श्री सेठ शूरजी वल्लभदास को निर्वाचित किया गया था। परन्तु वह आ नहीं सके, अतः उनके स्थान पर श्री पं० जगन्नाथ जी निरुक्तरत्न (अमृतसर) को सभापति बनाया

गया। पहले ला० भगवान्दास, प्रधान स्वागत-कारिणी सभा ने अपना अभिभाषण पढ़ा जिसका सार नीचे दिया जाता है—

पूज्य देवियो और उपस्थित सज्जनो !

आज हम सब सम्मिलित रूप से अपने प्रिय देश में बढ़ती हुई बेकारी की कठिन समस्या को हल करने के लिये एकत्र हुये हैं। इस अत्यन्त आवश्यक विषय में मैं भी अपने विचार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। इसीलिये अपने कर्त्तव्य से प्रेरित होकर जो कुछ मुझे उचित उपाय जान पड़े हैं आपके सम्मुख उपस्थित करता हूँ।

मेरे विचार में इस रोग का उपाय एक-मात्र अमोघ शक्ति के समान हमारी पूर्व ज्ञात महौषधि सादगी है। हमारे पूर्वजों के सर्वोच्च और आदरणीय वेश, खान-पान और रहन-सहन के नियम ही अनुकरणीय होने से ग्राह्य हैं।

हम इस कठिन पाप बेकारी को कैसे पृथक् कर सकते हैं, इस पर अपने विचार प्रकट करना चाहता हूँ। सुनिए ! मैं बहुत से ऐसे मनुष्यों को सदृश कट्टर स्वदेशी का पुजारी भी नहीं हूँ कि अन्य देश की बनी हुई वस्तुओं के अपने घर में आने तक न दूँ और न ऐसे मनचले पुरुषों में से हूँ कि विदेशी चमक-दमक की वस्तुओं के सम्मुख अपने देश की बनी हुई वस्तुओं को ठुकरा कर देश के व्यवसाय और कला-कौशल का गला घोंट कर अपनी सभ्यता और संस्कृति का घातक हूँ। जिस देश का व्यापार अन्य देशों से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है वह स्वयं अपना गला अपने हाथ से काटता है और संसार में कभी सुख से नहीं रह सकता। हम अपने प्राचीन इतिहास को देखते हैं कि जब हम अपने उत्थान की यौवनावस्था में थे तो हमारा व्यापार संसार के सम्पूर्ण देशों में फैला हुआ था और सम्पत्तिशाली भारतवर्ष अपना प्रतिस्पर्द्धी कोई देश नहीं रखता था। वर्तमान समय में भी उन्नतिशील देश इस श्रेष्ठ नियम का अवलम्बन करके ऊपर उठ रहे हैं और भविष्य में उठेंगे।

वर्तमान समय में हमें किसी व्यवसाय के लोगों से घृणा न कर समानता का व्यवहार करना चाहिए। जिससे व्यवसायी लोग उत्साहशील हों और व्यवसाय द्वारा अपनी-अपनी जाति और देश की सेवा करते रहें। इस प्रकार सहस्रों बेकार जो घृणा से कला-कौशल से दूर भाग गये हैं पुनः अपने-अपने धन्दों में प्रवृत्त हो जायेंगे, जिससे बेकारी बहुत सीमा तक दूर हो सकती है। द्वितीय जहाँ तक हो सके हम अपने देश की वस्तुएँ ही प्रयोग में लावें जिसके कारण लाखों मनुष्यों को कार्य मिल जावे।

हमारे प्यारे भारतवर्ष में प्रथम तो शिक्षित स्त्री-पुरुषों की संख्या ही बहुत अल्प है और जो शिक्षित हैं भी, उनमें ही अधिकांश बेकारी के दारुण पञ्जों में फँसे हुये हैं। इस कारण वे मनुष्य भविष्य में शिक्षा देने में अब अरुचि-सी दिखला रहे हैं। इसलिये इस

बढ़ते हुये असन्तोष की बाढ़ को रोकने का केवल एक-मात्र उपाय यह है कि शिक्षित और अशिक्षित समुदाय को काम देने के लिये बड़े-बड़े नगरों में छोटे-छोटे कारखाने खोले जावें, जिनका संचालन बड़े-बड़े अनुभवशील पुरुषों के हाथ में हो। इन कारखानों की यहाँ गिनती गिननी बहुत कठिन है। उदाहरणार्थ एक बहुत छोटे से दूध मक्खन और घी के व्यवसाय के संबंध में कहना चाहता हूँ। देखिये! यह व्यवसाय अनपढ़ आदमियों के हाथ में है। दूध जैसा अमूल्य पदार्थ जिसके ऊपर हमारी और हमारे छोटे-छोटे बच्चों की जिन्दगी निर्भर है हमारे हाथ में नहीं है। यदि यह व्यवसाय पढ़े-लिखे लोग करने लगें तो मुझे पूर्ण आशा है कि लाखों मनुष्यों को भली भाँति काम मिल सकता है।

यदि प्रत्येक प्रान्त की आर्यसमाजें प्रतिनिधि सभा के साथ दयाल बाग की तरह दस्तकारी के स्कूल और कालेज खोल दें, तो देश की बहुत-सी जनता बेकारी के रोग से बच सकती है। इस समय यदि हम यत्न करें तो आर्यसमाजें बड़ी सुगमता से छोटे-छोटे दस्तकारी के स्कूल चला सकती हैं। मेरा यह आशय नहीं है कि समाजें अपने धार्मिक कार्यों को छोड़ दें अपितु उसके साथ-साथ दस्तकारी का कार्य भी करते जावें। मैं यहाँ कह देना उचित समझता हूँ कि किसी बेकार मनुष्य को काम पर लगा कर उसे रोटी कमाने के योग्य बना देना भी पुण्य का काम है। जिन सज्जनों ने राधास्वामी सम्प्रदाय का दयाल बाग़ देखा है और वहाँ का डेरी फ़ारम देखा है वे कह सकते हैं कि दयाल बाग़ का डेरी फ़ारम हमारी सरकार के डेरी फार्मों से किसी दशा में कम नहीं है वरन मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि वह सरकार के डेरी फार्मों से कई हिस्से बढ़ा-चढ़ा है।

पश्चात् सेठ शूरजी वल्लभदास का अभिभाषण पढ़ा गया जिसका सार नीचे दिया जाता है।

माननीय सभ्य स्त्री-पुरुषो!

आज इस समय आपने मुझे इस व्यवसाय सम्मेलन का सभापति नियत करके जो मेरा सम्मान किया है, उसके लिये मैं आप सब का धन्यवाद गाता हूँ। निःसन्देह यह स्थान बहु मान का है, और जिस पञ्जाब प्रांत में इस व्यवसाय सम्मेलन का अधिवेशन हो रहा है उस पञ्जाब प्रान्त में व्यवसाय-कर्म-कुशल सुप्रतिष्ठित विद्वान् बहुत हैं, और यदि आप उनको यह स्थान देते तो मेरी अपेक्षा वे सम्मेलन का कार्य अधिक पूर्णता के साथ कर सकते थे। परन्तु आपने उन श्रेष्ठ विद्वानों को यह पद न देते हुए मेरे जैसे साधारण व्यवसायी को दिया है, इस में आपका एक उच्च ऐसा हेतु स्पष्ट दीखता है कि प्रान्तीय भाव को दूर कर सब आर्यों को एक ही व्यवसायिक बन्धु-भाव से सुसङ्गठित होने का समय आगया है, और यदि

सब आर्य इस समय प्रान्तीय भाव छोड़ कर सुव्यवसायों में सुसङ्गठित न होंगे तो आगामी तीव्र जीवन-कलह में उनका जीवन अत्यंत कष्टमय होगा।

वेद में अनेक व्यवसायों का वर्णन आया है, हाथ से कता सूत निर्माण करना, उसको रमणीय रंग देना और उससे उत्तम कपड़ा बनाना आदि व्यवसाय वेद के अनेक मन्त्रों में वर्णन किया है। हाथ से उलूखल मुसल की सहायता से चावल स्वच्छ करना और उसका यज्ञों में तथा भोजनों में उपयोग करने का आदेश वेदमन्त्रों और ब्राह्मण-ग्रन्थों में स्पष्ट है। यज्ञ-प्रकरण, दर्श पूर्णमास, याग आदि इसकी साक्षी इस समय में भी दे सकते हैं। यज्ञ में शिल्पप्रकरण है। यह सब प्रकरण ही बता रहा है कि शिल्पसाधन करना याजकों का प्रमुख कार्य है। यज्ञ प्रकरण में आसुरी माया का एक विशेष महत्त्व का भाग है। असुर देशों में जाकर उन देशों में अपने लोग भेजकर वहाँ से शिल्प सीख कर यज्ञों में उनका प्रयोग करना यह एक यज्ञविधि ही है। इन सब प्रकरणों का उल्लेख यज्ञविधि के प्रकरणों में स्पष्ट है। अतः जिन आर्यों को यज्ञ में प्रेम है, उनको इन व्यवसायों से दूर रहना सर्वथा असम्भव है। प्रत्यक्ष यजुर्वेद के ३०वें अध्याय में कई व्यवसायियों का उल्लेख है। इस अध्याय को आप स्वयं देख सकते हैं।

पाठक विचार करें कि वेद में इस प्रकार अनेक हुनरों और कारीगरी का उपदेश होते हुए हम व्यवसाय से दूर कब तक रह सकेंगे? वैदिक धर्म का सर्वांगीण पालन करने के लिए हमें व्यवसाय का संवर्धन करना चाहिए।

भारतवर्ष में आर्यसमाजों की संख्या कम से कम एक हजार है और उनमें आनेवाले आर्य पाँच लाख अवश्य होंगे। इनके घर में प्रति आर्य चार मनुष्य माने जायँ तो कम से कम बीस लाख लोग आर्यसमाजी भारतवर्ष में अवश्य होंगे। आर्यों के व्यवसाय से उत्पन्न होनेवाली वस्तुओं के खरीदार ये बीस लाख आर्य तो हैं ऐसा समझना चाहिए। क्योंकि मैं ऐसे किसी आर्य की कल्पना कर नहीं सकता कि जो आर्य होता हुआ भी विश्वासपात्र आर्य बनावट के पदार्थ न लेवे और अन्य पदार्थ लेवे। इसलिये आरम्भ में ही आपके व्यवसाय के लिये ये बीस लाख ग्राहक तैयार हैं, ऐसा ही समझना चाहिये। जो आर्य होते हुए भी आर्यसमाज के सदस्य नहीं हैं, और जो आर्यों के साथ सहानुभूति रखने वाले हैं, वैसे लोक भी कोई कम नहीं है। इस तरह हम विचार करेंगे तो निश्चय होगा कि हर एक मनुष्य को कम से कम साल-भर में दस रुपये की चीजें लगती हैं ऐसा माना जाय तो पूर्वोक्त आर्यों को दो करोड़ रुपये के पदार्थों की आवश्यकता है। इसमें कोई विवाद नहीं हो सकता।

इसके अतिरिक्त आर्यों से भिन्न जो अनेक जातियाँ हैं उनकी आवश्यकताएँ भी हम क्यों पूर्ण न करें? अर्थात् हमारे व्यवसाय को अन्य ग्राहक भी मिल सकते हैं। इस क्षेत्र का जब

हम विचार करते हैं, उस समय हमें ग्राहकों की न्यूनता नहीं रह सकती, इस विषय का निश्चय हो जाता है। व्यवसाय के लिये प्रारम्भ में ग्राहक अवश्य चाहियें, वे हमारे पास हैं इतना ही यहाँ सिद्ध हुआ। अब आगे कैसा कार्य चलाना चाहिये इसका विचार करेंगे।

हर एक समाज आर्यों का एक उत्पादक संघ और केन्द्र बने। आर्यों में प्रामाणिकता विशेष है, ठगने का भाव उनमें नहीं है, अतः इनके व्यवसाय पर जनता का विश्वास रहेगा, अर्थात् यदि आर्यसमाज ने कहा कि यह कपड़ा हाथ कते सूत का है तो आर्यों की प्रामाणिकता के कारण जनता का विश्वास उनके पदार्थों पर अवश्य रहेगा। इसी तरह अन्यान्य व्यवसायों के विषय में होगा। प्रामाणिकता व्यवसाय का प्राण है, वह आर्यों में है, और जब तक वह आर्यों के पास रहेगी, तब तक आर्यों का व्यवसाय बढ़ता ही जायगा। आजकल बाजारों में विश्वासपात्र स्वदेशी पदार्थ नहीं मिलते। केवल कांग्रेस द्वारा स्थापित अ० भा० ग्राम उद्योग के प्रमाणपत्रवाले दूकान पर सच्चे स्वदेशी पदार्थों की प्राप्ति होती है। ऐसी ही प्रामाणिकता आर्यों को अपने व्यवसाय-व्यवहारों में दक्षता के साथ स्थापित करनी चाहिये और आर्य शब्द व्यापारी प्रामाणिकता का समानार्थ होना चाहिये।

ग्रामों में इस तरह हर एक आर्यसमाज को धर्म-प्रचार का कार्य करते हुए व्यवसाय का केन्द्र बनना चाहिए। जो विविध व्यवसाय करने वाले कारीगर लोग हैं और जो प्रामाणिकता के साथ अपना कारोबार करना चाहते हैं, वे आर्यममाज के सभासद बनें और उनके पदार्थ आर्यसमाज लेकर ग्राहकों के पास भेज देवे और मूल्य उस कारीगर को देवे। इस तरह सुयोग्य रीति से करने पर आर्यसमाज का प्रसार भी बहुत शीघ्र और चारों ओर हो सकता है। सब प्रकार के व्यवसायी आर्यसमाज में आवेंगे, और व्यवसाय का प्रमाण बहुत बढ़ जायगा। अपने माल के लिये ग्राहक हैं, प्रामाणिकता के साथ धंदा करने का यहाँ अवसर है, यहाँ धोखा नहीं है, सचाई से यहाँ कार्य चलता है, ऐसा ज्ञात होते ही हजारों व्यवसायी, जो आज बेकार हो रहे हैं वे सब आर्यसमाज की शरण में आ जायेंगे और इस तरह धर्म का यह वृक्ष फलेगा और फूलेगा। अतः धर्म विचार को प्रधान रखकर हमें यह कार्य चलाना चाहिए।

इस समय तक ईसाई प्रचारकों ने दक्षिण-भारत में ऐसे ही व्यवसायों द्वारा खूब प्रचार किया है और यदि वे यहाँ ऐसा कार्य करके यश कमा रहे हैं, तो व्यवसाय का आश्रय करके प्रचार करने में हमें क्यों हिचकना चाहिए? चातुर्वण्य धर्म की रचना करने वाले आर्य अपने व्यवसायिक वैश्य और शूद्र वर्ण का संघटन करेंगे तो उसमें भय काहे का है?

जो वस्तु ग्राम के आर्यसमाज में न बिकने वाले हों वे प्रान्त के समाज में लाये जायें, और वहाँ से आर्य प्रतिनिधि सभा के पास आवें, तथा जहाँ बिकने का सम्भव हो वहाँ लिए जावें। इस तरह यह व्यवसाय जितना चाहे उतना बढ़ाया जा सकता है। यद्यपि मैंने यहाँ

यह कार्य प्रत्यक्ष आर्यसमाज करे ऐसा कहा है तथापि यदि आर्यसमाज की उपशाखा 'व्यवसायार्य समाज' नाम से चलायी जाय और वह इस कार्य को करे तो भी कोई हानि नहीं है। जैसा आप सब लोग योग्य समझेंगे वैसा आप निश्चय करने में समर्थ हैं।

सभापति महोदय ने नवयुवकों को अनुमति दी कि उन्हें दस्तकारी सीखनी चाहिए और परिश्रम करने से जी नहीं चुराना चाहिए। इस सम्मेलन में निम्न प्रस्ताव पास हुए—

१. यह सम्मेलन हिन्दु नौजवानों के अन्दर साधारणतया और शिक्षित भाग के अन्दर विशेषतया बेकारी की बढ़ती हुई बीमारी को तशवीश की निगाह से देखता है और उसे दूर करने के लिए निम्न लिखित आयोजनाएँ उपस्थित करता है—

(क) अपने शिक्षा-काल के दौरान में हिन्दू नौजवानों को फ़ुरसत के वक्त दस्तकारी का काम सीखना चाहिए। उदाहरणार्थ दरज़ी का काम, लोहार का काम, बढ़ई का काम, मकैनीकल और अलैक्ट्रिकल काम, ग़लीचे बुनना, खिलौने बनाना, कीमयाबी चीज़ें तैय्यार करना, फ़ोटोग्राफ़ी, मुसव्वरी आदि। तमाम गुरुकुलों, आर्य और हिन्दी स्कूलों में यह चीजें सिखाने का इन्तज़ाम होना चाहिए।

(ख) नौजवानों को शहरी ज़िन्दगी के जादू को दिलों से उतार देना चाहिए और देहाती इलाक़ों में फैल जाना चाहिए जहाँ *फारमिंग* आदि के लिए मैदान खुला है। वह वहाँ शिक्षा का प्रसार कर सकते हैं। और ग्रामों में अपने अधिकारों का एहसास पैदा करके ग्राम सुधार का काम कर सकते हैं।

(ग) इन्हें प्राचीन वैदिक सादगी और ब्रह्मचर्य के नियमों को ग्रहण करना चाहिए और अपने जीवन की आवश्यकताओं को कम कर देना चाहिए।

२. यह सम्मेलन नौजवानों पर ज़ोर देता है कि वे परिश्रम से प्रेम करना सीखें और इस में शर्म महसूस न करें ख्वाह वह ऐसे पेशे हों जो नीच जातियों ने भी ग्रहण किये हों क्योंकि किसी प्रकार का परिश्रम भी इज्ज़त की निशानी है।

३. यह सम्मेलन संगठन के बड़े-बड़े धनिक लोगों पर ज़ोर देता है कि वह इस नाज़क मरहला पर मैदान में आएँ और *काटेज इण्डस्ट्रीज़* को संगठित करें और इनमें सरमाया लगाएँ ताकि सामान आदि जमा हो सके। और शिल्प के काम में देश के बड़े-बड़े वैज्ञानिकों से सहायता ली जा सके ताकि जाति के बहुत से बेकार काम पर लग जाएँ।

४. भ्रातृ-भाव बढ़ाने के लिए सम्मेलन प्रतिष्ठित और धनिक आर्यसमाजियों का ध्यान *म्यूचिअल एड सोसाइटी* (पारस्परिक सहायता सभा) के संगठित करने और एक आर्यन बैंक लिमिटिड स्थापित करने के काम की ओर दिलाया जावे। एक सब-कमेटी क़ायम

की जावे जो इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए और सदस्य भर्ती करने का अधिकार रखती हो। सब-कमेटी के सदस्य निम्न होंगे—

१. सेठ शूरजी वल्लभदास, २. ला० भगवान्दास, ३. प्रो० शिवदयालु एम० ए०, ४. सेठ मूलचन्द, ५. ला० चिरञ्जीतलाल, ६. सेठ सत्यपाल विरमानी, ७. लाला जगन्नाथ निरुक्तरत्न।

इसके पश्चात् व्यवसाय सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त हुई।

११. ग्राम वेद-प्रचार सम्मेलन

सोमवार, १३ एप्रिल को गुरुदत्त भवन में दयानन्द उपदेशक विद्यालय के पण्डाल में श्री डा० भक्तराम सहगल वैदिक मिशनरी के सभापतित्व में ग्राम वेद-प्रचार सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में निम्न-लिखित प्रस्ताव स्वीकार हुए—

१. यह सम्मेलन आर्य पुरुषों की दृष्टि ग्रामों में अधिक प्रचार की तरफ़ खींचता है और प्रेरणा करता है कि छोटे-छोटे ग्रामों में भी आर्यसमाजों को संगठित करके लोगों के सामाजिक तथा आत्मिक जीवन को ऊँचा बनाते हुए वैदिक धर्म का प्रचार करें।

इस प्रस्ताव को प्रो० शिवदयालु ने प्रस्तुत करते हुए बतलाया कि शहरों के लोगों को भी ग्रामों के लोगों की तरह सादा जीवन बनाना चाहिए और इनसे प्रेम-पूर्वक वर्ताव करना चाहिए तथा उनकी सफ़ाई का विशेष ध्यान रखना चाहिएँ। उन्होंने कहा कि ग्रामों में पाँचवीं श्रेणी तक के स्कूल कन्याओं और बालकों के इकट्ठे खुलवाने चाहिए क्योंकि पृथक्-पृथक् स्कूलों का व्यय अधिक आयगा। यह लोग शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। पाँचवीं श्रेणी तक के बच्चों को इकट्ठा पढ़ने में कोई हरज नहीं हो सकता। डा० ज्ञानचन्द (खानेवाल) ने प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा कि ग्रामों में जाकर खुद उनकी रिहाइश और उत्तम स्वास्थ्य का ख्याल करें और उचित प्रबन्ध करें। आर्यसमाज के नियम ग्राम-ग्राम में लटकवा दिए जाएँ ताकि सब लोग उनसे परिचित हों। मैजिक लैन्टरन और लघु ट्रैक्टों द्वारा प्रचार कराया जाय।

२. (क) यह सम्मेलन आर्य पुरुषों से अनुरोध करता है कि ग्रामों में आर्य पुरुषों की माली हालत सुधारने और बेकारी को दूर करने लिए भिन्न-भिन्न स्थानों पर छोटी-छोटी दस्तकारियों को शुरू करा दें और ऐसे उपदेशक बनाने का यत्न किया जाय जोकि इन दस्तकारियों को खुलवाते हुए वैदिक धर्म का प्रचार करें।

(ख) प्रचारक इस बात का खास ख्याल रक्खें कि दूसरे धर्म के तबलीग़ी मिशन (शुद्धि-संघ) किस तरह काम कर रहे हैं और किस तरह भोली-भाली जनता को पाखण्डियों के चंगल से बचाया जा सकता है। गाँवों की आम दस्तकारियाँ यथा तरखानाँ, लोहारा और

सुनार का काम है इनकी ओर ध्यान देकर उन्नति की जावे जिससे वे लोग अधिक धन कमा सकें। शहरों में से ज़िम्मेवार सज्जनों की मण्डलियाँ गाँवों में जाकर प्रेम-पूर्वक प्रचार करें और इनको हर प्रकार की सहायता दें।

३. यह सम्मेलन ग्रामों में आसानी से प्रचार करने के लिए ग्रामों के तमाम आर्यसमाजों से पुर-ज़ोर प्रार्थना करता है कि वे अपने-अपने ज़िलों में 'ग्राम वेद-प्रचारिणी सभा' की आयोजना करें और अपना सम्बन्ध 'ग्राम वेद-प्रचारिणी सभा' लाहौर के साथ करें ताकि ग्रामों का संघटन हो सके।

४. हिन्दी प्रचार को बढ़ाने के लिए सब आर्यसमाजों तथा आर्य पुरुषों से यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि अपने-अपने स्थानों पर रात्रि हिन्दी पाठशाला खोलें और अपने समीप के सब अनपढ़ स्त्री-पुरुषों को हिन्दी पढ़ाने की कोशिश करें।

पं० बनवारीलाल जी ने वक्तृता देते हुए कहा कि प्रत्येक आर्य को चलता-फिरता उपदेशक बनना चाहिये और प्रेम से दूसरे मतावलम्बियों में प्रचार करना चाहिए।

इति

(*Continued from Title Page 2*)

4. Of the above, " Notes " and " Receipt Books " to the value of Rs. 78,000 approximately were only issued to the different workers for collection purposes as per detail below :—

100 Rupee " Notes "	80 Notes	Rs. 8,000
50 Rupee " Notes "	300 Notes	Rs. 15,000
25 Rupee " Notes "	260 Notes	Rs. 6,500
10 Rupee " Notes "	980 Notes	Rs. 9,800
5 Rupee " Notes "	1,940 Notes	Rs. 9,700
1 Rupee " Notes "	20,850 Notes	Rs. 20,850
		Rs. 69,850
Add 4 Annas Receipt Books issued		Rs. 8,150
		Rs. 78,000

5. From the Sub Ledger kept in the office for " Notes " and " Receipt Books " issued to different persons, it will be seen that out of the above Rs. 78,000 worth of "Notes" " Notes " and " Receipt Books " to the value of Rs. 62,766 have been returned by the workers to the Head Office. This means that " Notes " to the value of (Rs. 78,000 minus 62766=) Rs. 15234/- have only been sold by means of " Notes." The money, time and labour spent on the printing of " Notes " is a sheer waste.

6. The Sub Ledger is not kept properly. Personal Accounts of each pe[illegible] whom the " Notes" were issued should have been kept and the balances str[illegible] those in the Loan or Advance Sub Ledgers. This has not been done. [illegible] waste of time and labour if we now try to put the Sub Ledger in order[illegible] unsold " Notes " now in office may be burnt and the Aryan Public be[illegible] Press that since the accounts of the Golden Jubilee have been clos[illegible] "Receipt Books" should not be cashed in future.

7. The total receipts collected up to the time of Sha[illegible] to the end of 1993 V.E. is Rs. 61,043/11/6 and the expendit[illegible] is Rs. 12,607/- and 15,190/-. The balance of Rs. 44,3[illegible]

(1) Ved Prachar Rs. 34,[illegible]

(2) Ved Bhashya Rs. [illegible]

(3) Village Reform etc. [illegible]

A sum of Rs. 53,560/- has [illegible] to get as much money collected a[illegible]

सभा का सचित्र इति

सभा द्वारा तैयार कराया है। प्रत्येक आर्य
आर्यसमाज को इसकी एक प्रति अपने पास र
चाहिए।

पृष्ठ-संख्या ७०० : मूल्य २॥)

२२ चित्रों के साथ

यदि आप आर्यसमाज के शहीदों का जीवन-
पढ़ना चाहते हैं तो इस इतिहास को पढ़िए।
आर्य संन्यासियों, उपदेशकों तथा शहीदों के स
जीवन दिए गए हैं।

यदि आप आर्यसमाज की संस्था और आन्दोलनों का रो
पढ़ना चाहते हैं तो इसे पढ़िए।

आर्य युवकों और आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं के हृदयों में
उत्साह पैदा करने के लिए इस इतिहास की कथा घर-घर में होनी

मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन,